चन्दामामा
सितम्बर १९८५

जब दाँतों की सड़न को मेरे बेटे ने पहचाना

मम्मी, अनिल के दाँत में छेद है!

छेद नहीं, दाँतों की सड़न'

हाँ हाँ वही, फिर मैंने उसे अपने दाँत दिखाए और अपने स्वादवाले झागवाले टूथपेस्ट के बारे में बताया...

फोरहॅन्स फ़्लोराइड बेटे!

हाँ! मैंने कहा— मैं इसलिए इस्तेमाल करता हूँ क्योंकि तुम कहती हो कि यह अच्छा टूथपेस्ट है और मुझे भी यह बहुत अच्छा लगता है!

हाँ, यह मसूड़ों को ऐसा मज़बूत बनाता है कि दाँत हमेशा अच्छे बने रहते हैं

अच्छा मम्मी! मम्मी, मैं केक खालूँ? सोने के पहले दाँत ब्रश कर लूँगा

फोरहॅन्स फ़्लोराइड
स्वाद वाला, झागवाला टूथपेस्ट
दाँत और मसूड़े दोनों की सुरक्षा करता है.

331 F 183 HIN
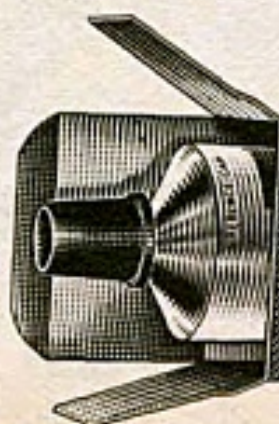
चिम्पू पिकलू और भोलू गोलू

की अपार सफलता के बाद

डायमंड कामिक्स

पेश करते है एक और

सुपर थ्री टोन

डायमण्ड कामिक्स में 32 पृष्ठों में आश्चर्य जनक मनोरंजन

हिन्दी अंग्रेजी में एक साथ उपलब्ध

अन्य नये डायमंड कामिक्स

रमन और मसाला डोसा 4/-
अंकुर और जादूई मटके 4/-
अण्डे राम डण्डे राम और होटल में हंगामा 4/-
लम्बू मोटू और पत्थर की लाश 4/-
महाबली शाका और काला बाज 5/-
पलटू और चतुर कौआ 4/-

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715 दरियागंज नई दिल्ली-110002

सितम्बर 1985

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : २-००

वार्षिक चन्दा : २४-००

NAME
CLASS DIV.
SUBJECT
SCHOOL

PARLE Melody Chocolate Toffs

NAME
CLASS DIV.
SUBJECT
SCHOOL

PARLE POPPINS

NAME
CLASS DIV.
SUBJECT
SCHOOL

PARLE Gluco

NAME
CLASS DIV.
SUBJECT
SCHOOL

PARLE POPPINS

NAME
CLASS DIV.
SUBJECT
SCHOOL

PARLE Melody Chocolate Toffs

स्कूल की
किताबों पर
लगाओ पारले.
टिफिन
बॉक्स में भी
भरो पारले.

PARLE Melody Chocolate Toffs

PARLE POPPINS

PARLE Gluco
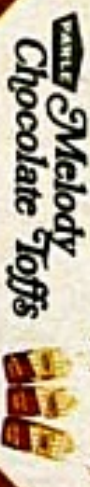
NEW!
POWER PACKED SURF
POWER PACKED
Surf
washes whitest...
keeps clothes like new!
सर्फ़
नया पावर पैक्ड सर्फ़.
कण-कण में शक्ति का भंडार – पहले से कहीं ज़्यादा शक्तिशाली फ़ार्मूले से तैयार. गहरी सफ़ाई-धुलाई करे. सफ़ेद कपड़ों में लाए सफ़ेदी शानदार, रंगीन कपड़ों को बनाए सबसे चमकदार.
और यह सब करते हुए कपड़े को सही-सलामत रखे ताकि उसका नयापन बरकरार रहे, यानी हर कमीज़, हर चादर सदा लगे कोरी-कोरी, साफ़-सुथरी, ऐसी सफ़ेद – जैसे नयी.
धुलाई-दर-धुलाई!
नयी निराली खुशबू: जो आपके कपड़ों में बस जाए. इतनी स्वच्छ, इतनी ताज़ी!
आकर्षक नया पैक: नये फ़ार्मूलेवाले पावर पैक्ड सर्फ़ के लिए विशेष.
तो देर किस बात की... आज ही ले आइए अपना नया पावर पैक्ड सर्फ़!
सर्फ़ की धुलाई सबसे सफ़ेद... कपड़े दिखते सदा नये!
LINTAS SU 325 2117 HI
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

चन्दामामा

संस्थापकः चक्रपाणि   संचालकः नागिरेड्डी

लालची आदमियों की कामनाओं की कोई हद नहीं होती। वे सब कुछ पाकर भी संतुष्ट नहीं होते, बल्कि किसी की कृतज्ञता को अपकार में बदल देते हैं। यदि कोई अपनी कुशलता से उन्हें उनकी वास्तविकता का बोध करा दे, तो शायद वे बदल जायें! 'कृतज्ञता का बोझ' कहानी में हमें बड़े रोचक ढंग से इस तथ्य का प्रमाण मिलता है।

अमर वाणी

बहिर्मरीचं मलिन मन्तस्सारं हि दृश्यते ।
विकार रूपोपि बुधः, हृदि प्रज्ञान्वितः खलु ॥

[रूप को देखकर किसी के अन्तर्गुण को नहीं समझा जा सकता। बाहर से मलिन दिखाई देने पर भी काली मिर्च अन्दर से बड़ी तीखी होती है। इसी प्रकार कई विद्वान विकार-रूप होने पर भी हृदय में प्रज्ञावान होते हैं।]

वर्षः ३६   सितम्बर १९८५   अंकः १

एक प्रतिः २-००   वार्षिक चन्दाः २४-००

बच्चों! जल्दी करो!

एक आकर्षक 'एशियन वाइल्डलाइफ़ एलबम' और १०० 'फोल्ड अप लैटर्स' पाओ-बिल्कुल मुफ़्त!

कोई प्रवेश-शुल्क नहीं है!
कोई वाक्य नहीं लिखना है!

बस आप हमें ५ फ्रूट्स के ४ खाली पैकेट १ रुपये की डाक-टिकटों के साथ लिफाफामें भेज दो...

5 FROOTS
ASIAN WILD LIFE ALBUM

...और बदले में हम आपको देंगे एक आकर्षक 'एशियन वाइल्डलाइफ़ एलबम'

इस एलबम को जानवरों की तस्वीरों से पूरा करो जो कि आपको हर ५ फ्रूट्स के पैकेट में मिलेंगी और तब आप पाएंगे १०० 'फोल्ड अप लैटर्स' जिन पर आपका नाम व पता छपा होगा! और हां, एलबम भी आपकी होगी!

आपकी मनपसंद ५ फ्रूट्स टाफियां
मज़ेदार स्वाद की मनचाही ऊंचाइयां

कोई प्रतियोगिता नहीं है!

AMC/85

रामकृष्ण फूड प्रॉडक्ट्स प्रा. लि.
शिवाजीनगर, पुणे-४११ ००५
फोन: ५७११६, ५६२५०.

'चन्दामामा' के संवाद

चोरों को पकड़ने वाला तोता

एक धनी परिवार में एक बड़ी चोरी हुई। काफ़ी खोजबीन करने पर भी इस बात का पता न लग सका कि चोर कौन है। उस परिवार की मालकिन के पास एक तोता था। वह तोता बराबर यही पुकारता रहा, "रोनी, इधर आओ! रॉबर्ट, इधर आओ!" उस औरत ने पुलिस को यह सूचना दी। रोनी और रॉबर्ट का नाम डाकू-लुटेरों की रिकार्ड-सूची में दर्ज़ था। पुलिस ने उन्हें गिरफ़्तार कर लिया। डकैती के समय आये वे डाकू घर में किसी को न पाकर एक दूसरे का नाम लेकर पुकारते थे। तोते ने जैसा सुना, वैसा का वैसा दोहरा दिया।

गलनेवाली धातु

न्यू हाम्पशायर नाम की एक कम्पनी ने एक नई धातु का आविष्कार किया। यद्यपि यह एक धातु है, फिर भी अगर इसे पानी में डाला जाये तो यह बारह मिनट में गलकर अपने अस्तित्व को खो देती है।

जलमग्न नगर

'महाभारत' ग्रंथ में ऐसा उल्लेख है कि श्री कृष्ण के लीला-संवरण के बाद द्वारिका नगरी समुद्र में डूब गयी थी। हाल ही में डॉ॰ एस॰ आर॰ राव के नेतृत्व में पुरातत्व विभाग की ओर से जो खुदाई हुई, उससे ज्ञात हुआ है कि १५०० ई॰ पू॰ सचमुच ही एक प्राचीन नगर समुद्र में डूब गया था।

क्या आप जानते हैं ?

१. क्या आप जानते हैं कि पृथ्वी की गोलाई में सर्वप्रथम अपना विश्वास प्रकट करनेवाला व्यक्ति कौन है ?

२. सबसे पहले पृथ्वी की परिधि का हिसाब किसने किया ?

३. ध्रुव प्रदेशों की अपेक्षा भूमध्य-रेखा के समीप की वस्तुओं का वज़न कम क्यों होता है ?

४. विश्व का सबसे बड़ा कृत्रिम बन्दरगाह कहाँ है ?

५. संसार के सबसे बड़े रेगिस्तान सहारा के बाद दूसरा सबसे बड़ा रेगिस्तान कहाँ पर है ?

उत्तर पृष्ठ ६५ पर देखें

पुराण कथा

अजामिल

प्राचीन काल में कान्यकुब्ज नगर में अजामिल नाम का एक ब्राह्मण रहता था। बचपन और किशोर वय में अजामिल अत्यन्त सदाचारी एवं धार्मिक प्रवृत्ति का था, किंतु युवावस्था में एक दिन जब वह फूल चुनने के लिए पुष्प वाटिका में गया तो उसकी मुलाक़ात कुछ ऐसे युवकों से हुई, जो जुआ, शराब आदि दुर्व्यसनों के शिकार थे। उनकी संगति करने के कारण अजामिल का मन गलत रास्ते पर मुड़ गया।

अजामिल ने विवाह भी एक ऐसी स्त्री से किया, जिसने घर-द्वार छोड़ दिया था और जो ताड़ी बेचने का धर्मविरोधी धंधा करती थी। अजामिल उसके साथ भोग-विलास का जीवन बिताने लगा। इनके कुल आठ संतानें हुईं। आखिरी बच्चे को अजामिल ने 'नारायण' नाम दिया।

धीरे-धीरे वृद्धावस्था आयी। अजामिल ने बीमारी के कारण खाट पकड़ ली। मृत्यु का समय निकट आया तो उसे यमराज के दूत दिखाई देने लगे। अजामिल पर मृत्यु-भय छा गया। उसने काँपते स्वर में अपने सबसे अधिक लाड़ले छोटे बेटे को पुकारा "नारायण !" "नारायण !"

ये शब्द विष्णु के दूतों के कानों में भी पड़े। वे तुरन्त अजामिल के सामने प्रत्यक्ष हो गये। उस समय वहाँ उपस्थित यमदूतों तथा विष्णुदूतों के बीच इस बात को लेकर वाद-विवाद शुरू हुआ कि अजामिल को यमलोक में ले जाया जाये या विष्णु लोक में। अजामिल अचेतन था, फिर भी उसके कानों में उनके बीच की बातों की अस्पष्ट-सी ध्वनि पड़ी। अर्धचेतना में ही उसे यह ज्ञान हुआ कि उसने अब तक कितना अधम जीवन बिताया है! उसकी आँखों से पश्चात्ताप के आँसू बह निकले।

यमराज के दूतों ने सोचा, "यह आदमी तो विष्णु-भक्त मालूम पड़ता है। हम लोग शायद गलती से यहाँ आ गये हैं" और वे वहाँ से चले गये। ऐसा प्रसंग घटने के कारण अजामिल की मौत की घड़ी टल गयी और अब वह धीरे-धीरे स्वस्थ होने लगा।

उस दिन से अजामिल के भीतर भारी परिवर्तन हुआ। उसे याद आया कि उसने तो केवल अपने पुत्र नारायण को पुकारा था, इतने पर भी विष्णु-दूत उसके समक्ष प्रत्यक्ष हो गये। वह भगवान विष्णु के इस अपार प्रेम को देखकर अत्यन्त आनन्दित हुआ। अब वह अपना शेष जीवन ध्यान, सदाचरण और भगवद् भक्ति में बिताने लगा। अंत में उसने गंगा-तट पर अपनी पार्थिव काया को त्यागा और विष्णुधाम को प्राप्त किया।

१०

[अंधेरा फैलने के बाद वृक्ष की शाखाओं में छिपकर सो रहा चंद्रवर्मा गरुड़ पक्षियों के पंखों की हवा के धक्के से उछल कर एक गरुड़ पक्षी की पीठ पर ही जा गिरा। उसने गरुड़ पक्षियों की बातचीत सुनी। तभी आधीरात के समय 'अग्निपक्षी' वहाँ आया और गरुड़ पक्षियों से बोला कि अगर वे जादूगरनी कापालिनी को पकड़कर मांत्रिक शंखु के हाथों में सौंप देंगे तो उन्हें अच्छा पुरस्कार मिलेगा। पक्षियों ने उसकी बात मान ली। अब आगे पढ़िये...]

अग्नि पक्षी ने गरुड़ों के साथ जो बातचीत की, उसे चंद्रवर्मा ने बड़े ध्यान से सुना। यह सोचकर उसके उत्साह और आनन्द की कोई सीमा न रही कि सौ योजन दूरी पर वास करनेवाले शंखु के पास पहुँचने के लिए अब उसे पैदल चलकर नहीं जाना पड़ेगा। गरुड़ के पंखों में छिपकर वह बड़ी आसानी से कुछ ही देर में वहाँ पहुँच जायेगा और इस तरह रास्ते की तमाम यातनाओं से बच जायेगा। उसने मन ही मन कालनाग को धन्यवाद दिया। उसकी सहायता से ही चंद्रवर्मा ने विचित्र वृक्ष का फल तोड़ कर खाया था, जिसके फल स्वरूप वह सभी पशु-पक्षियों की भाषा समझने लायक़ बन चुका था।

अनायास मिले इस अनोखे अवसर की याद करके चंद्रवर्मा फूला न समाया। वह बड़ी उत्सुकता से इन्तज़ार करने लगा कि कब सुबह हो और कब वह गरुड़ों के साथ सौ योजन

उड़कर शंखु के निवास-स्थान उस पहाड़ पर पहुँचे ।

उसने अपने मन में सोचा, कापालिनी को फँसाने के लिए मांत्रिक शंखु जो कपट-उपाय रच रहा है, वह कभी सफल नहीं हो सकता। कापालिनी इतनी भोली भाली औरत नहीं है कि उसके चंगुल में फँस जाये। हो सकता है, उसे पकड़ने के लिए पहुँचे हुए गरुड़ों को वह काल नाग का आहार ही बना दे ।

चंद्रवर्मा इसी तरह के विचारों में खोया हुआ था कि सुबह हो गयी ।

सूरज की किरणों का स्पर्श होते ही गरुड़ पक्षी आँखें खोलकर पंख फड़ फड़ाते हुए हवा में उड़ गये ।

पक्षी की पीठ पर पंखों के बीच बैठा हुआ चंद्रवर्मा यह देखकर अत्यन्त आनन्दित हुआ कि पक्षी उत्तरी दिशा की ओर उड़े चले जा रहे हैं। देखते-देखते वे दोनों गरुड़ पक्षी पहाड़, जंगल, नदी-नाले पार करते हुए किसी पहाड़ के निकट पहुँचे ।

पक्षियों की बातचीत से चंद्रवर्मा समझ गया कि वह पहाड़ ही शंखु मांत्रिक का निवास-स्थान है ।

चंद्रवर्मा यह सोच कर उत्साह में आ गया कि आख़िर अनेक विघ्न-बाधाओं को सह कर वह अपने लक्ष्य के निकट पहुँच गया है ! वह अपने आगे के कार्यक्रम के बारे में विचार करने लगा ।

चंद्रवर्मा जिस गरुड़ के पंखों में छिपा हुआ था, वह नीचे झाँक कर दूसरे गरुड़ पक्षी से
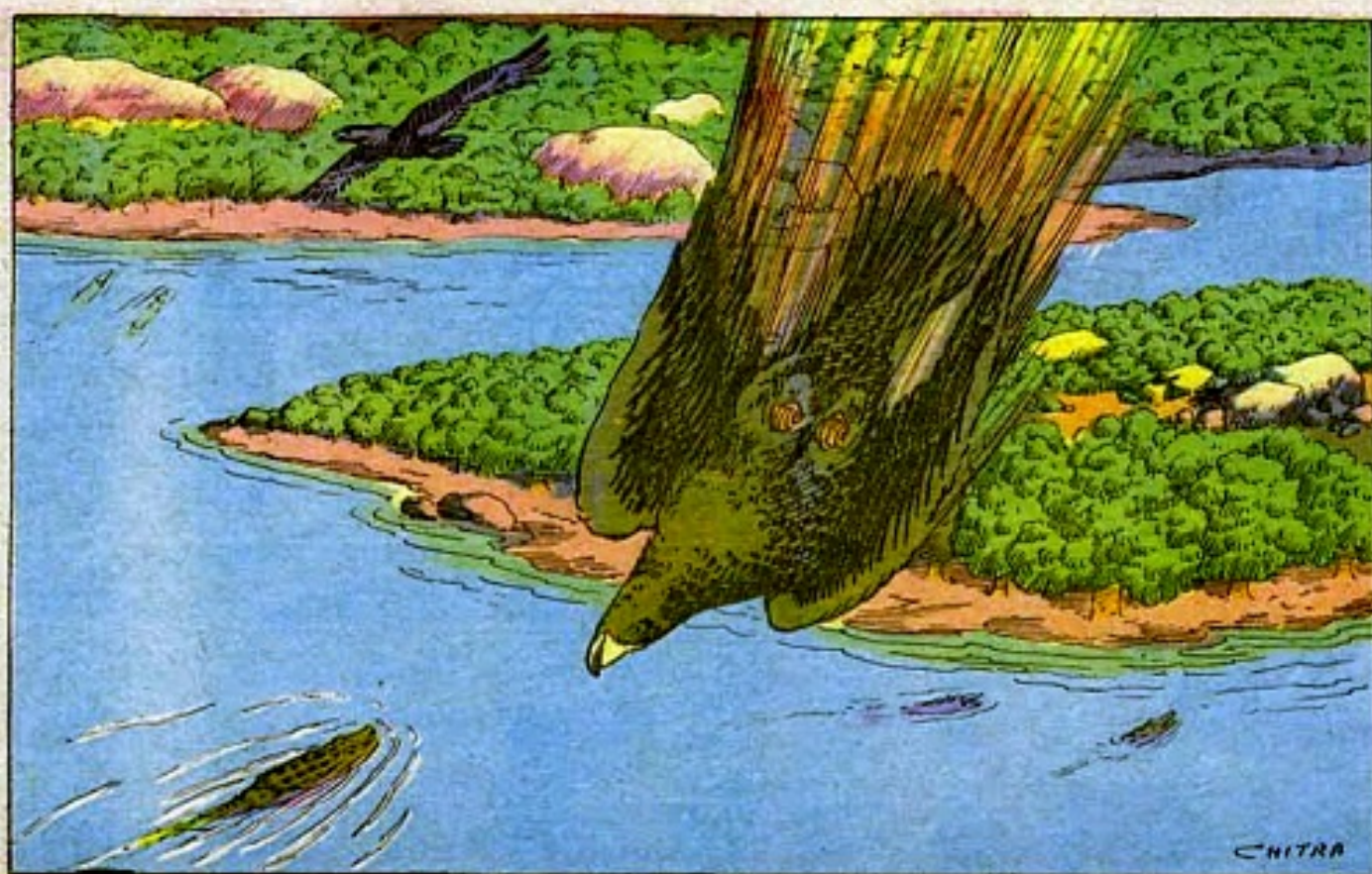
बोला, "मेरे दोस्त, इस सरोवर को देखते हो न ? लो, देखो, हाथी के बराबर का मगर मच्छ। वह मगर मच्छ का मांस चखे काफ़ी दिन हो गये हैं।"

यह कहकर वह तीर की तरह नीचे उतरा और सरोवर में कूद पड़ा।

गरुड़ के इस तरह अचानक नीचे उतरने से चंद्रवर्मा झटका खा गया और उसकी पकड़ ढीली हो गयी।

वह गरुड़ की पीठ पर से फिसल कर हवा में चक्कर काटता हुआ सरोवर में गिर पड़ा।

गरुड़ पक्षी को इसका आभास भी नहीं मिला कि कोई मनुष्य उसकी पीठ पर से सरक कर सरोवर में गिर रहा है।

सरोवर में उतरते समय उसकी सारी दृष्टि मगर मच्छ पर केंद्रित थी। चंद्रवर्मा की निगाह भी उसी मगरमच्छ पर जमी हुई थी। उसे पक्का विश्वास हो गया था कि आज वह गरुड़ या मगर मच्छ का आहार बन जायेगा। इस विचार से ही वह आपाद मस्तक काँप उठा। जिस क्षण वह धम्म से पानी में गिरा, उसने देखा कि सरोवर से ताड़ वृक्ष के बराबर ऊँची एक जल-लहरी आसमान में उठ रही है।

वास्तव में यह जल-लहर नहीं, गरुड़ पक्षी के पंजों के बीच छटपटा रहा मगर मच्छ का शरीर था, जिसे लेकर गरुड़ आसमान की तरफ़ उड़ रहा था। गरुड़ पक्षी की तेज़ आवाज़ और पंखों की फड़फड़ाहट से दिशाएँ गूँज रही थीं।

चंद्रवर्मा की आँखों से यह दृश्य अभी ओझल भी नहीं हुआ था कि वह पानी में

अगर वह किसी तरह उन घने वृक्षों के बीच पहुँच जाता है तो शंखु के सेवकों की नज़र से बच जायेगा ।

अभी किनारा क़रीब बीस-पच्चीस गज़ की दूरी पर था कि चंद्रवर्मा को अपने पास के पानी में हलचल और बुलबुले उठते दिखाई दिये ।

चंद्रवर्मा ने देखा, एक विशाल मगर मच्छ मुँह बाये तेज़ी से उसकी तरफ़ चला आ रहा है ।

चंद्रवर्मा क्षण भर के लिए स्तम्भित रह गया । उसका शरीर इस तरह सरोवर के तल की ओर खिंच रहा था, मानो उसके पैरों से भारी पत्थर बाँध दिया गया हो ।

भय के कारण उसका सारा शरीर थर-थर काँपने लगा, लेकिन दूसरे ही क्षण उसने अपनी सारी ताक़त लगायी और अपने शरीर को वेग के साथ घसीटता हुआ किनारे पर जा लगा ।

चंद्रवर्मा को केकड़े की तरह चबाने की इच्छा रखने वाला मगरमच्छ कुछ विलम्ब से वहाँ पर आ पहुँचा । लेकिन इस बीच चंद्रवर्मा पानी से निकलकर घने वृक्षों की ओर दौड़ पड़ा था । मगर मच्छ अपना सिर निकालकर थोड़ी देर चंद्रवर्मा की दिशा में देखता रहा, फिर हताश हो पानी में डुबकी मार सरोवर के बीच लौट गया ।

चंद्रवर्मा हाँफता हुआ एक पेड़ के तने से टिक कर विश्राम करने लगा । तभी उसे अपनी तलवार का स्मरण आया । जब वह गरुड़ पक्षी की पीठ से सरोवर में गिरा था, तब कहीं उसकी

डुबकी खा गया । थोड़ी देर बाद वह सतह पर तैर कर आया तो उसने सरोवर में चारों तरफ दृष्टि दौड़ायी ।

उसने देखा, छोटे-बड़े कई मगर मच्छ तितर-बितर होकर तैरते हुए दूर भागे जा रहे हैं ।

चंद्रवर्मा ने सोचा, जो कुछ हुआ, भले के लिए हुआ । उन गरुड़ पक्षियों के आक्रमण के कारण ये मगर मच्छ भाग रहे थे । वरना अब तक वह किसी न किसी मगर मच्छ का ग्रास बन गया होता ।

चंद्रवर्मा के प्राणों को अब भी ख़तरा था । वह अपनी सारी शक्ति बटोर कर किनारे की तरफ़ तेज़ी से तैरने लगा ।

सरोवर के किनारे घने वृक्ष फैले हुए थे ।

तलवार भी निकल कर न जा पड़ी हो। तलवार खोने के भय से उसे व्याकुलता-सी हुई। उसने अपनी म्यान पर हाथ रखा। तलवार का थोड़ा सा हिस्सा म्यान से बाहर निकला हुआ था। चंद्रवर्मा ने तलवार खींच ली और म्यान में भरे जल को नीचे उंड़ेल दिया। फिर बड़ी संतुष्टि के साथ तलवार को म्यान में रख लिया।

"मैं बड़ा भाग्यवान हूँ। सौ योजन की दूरी बिना किसी थकान के थोड़े समय में तै कर ली। मगर मच्छ के मुख के पास जाकर भी उसका आहार बनने से बच गया। आत्म-रक्षा के लिए आवश्यक एक मात्र अस्त्र अपनी इस तलवार को नहीं खोया। सब कुछ अच्छा ही हुआ। लेकिन, अब मेरा कर्त्तव्य क्या होगा ?" इस तरह सोचता हुआ चंद्रवर्मा उठ खड़ा हुआ।

चंद्रवर्मा घने वृक्षों की छाया में चलने लगा। उसने कुछ दूर जाकर घने वृक्षों की डालों को सामने से हटाकर आगे की तरफ़ दृष्टि दौड़ायी तो देखा कि सामने कुछ ही दूर पर एक ऊँचा पहाड़ है। औंधे रखे हुए लड्डू की तरह उसकी आकृति है। ऊपर से कुछ नुकीला और नीचे की ओर क्रमशः समतल और चौड़ा सा दिखनेवाला यह पहाड़ और पहाड़ों की तुलना में कुछ अलग ही नज़र आ रहा था।

वह निश्चल होकर उस पहाड़ को परख कर देखता रहा ! उसकी आँखें शंखु के निवास की टोह लेने लगीं। आख़िर वह विचार करने लगा-।

"यह तो मांत्रिक शंखु का पहाड़ है। मैं

इसके निकट पहुँच गया हूँ और अब मुझे इस मांत्रिक के मंत्र गृह से अपूर्व शक्तियों वाला वह शंख हासिल करना है।"

चंद्रवर्मा ने याद किया कि वह शंख एक नाग के कंठ में लटक रहा होगा और नाग दीवार की एक खूंटी पर लटक रहा होगा। वह शंख चुरा कर कापालिनी के हाथों सौंपना है। अब तक का सारा प्रयास सफल रहा है। लेकिन अब उस शंख को कैसे प्राप्त किया जाये, यह एक जटिल समस्या है।

यही उसका अन्तिम लक्ष्य था ! इस की प्राप्ति से उसका जीवन सफल हो सकता था। इस लिए उसे अत्यन्त जागरूक होकर इस लक्ष्य को साधना था।

चंद्रवर्मा अनेक प्रकार के विचारों से घिरा हुआ था। उसने दीर्घ निश्वास लिया। कापालिनी को वचन देकर जब वह मांत्रिक शंखु के निवास-स्थान इस पहाड़ के लिए निकला था, तब उसके सामने सबसे भारी समस्या यही थी कि सौ योजन की यह कठिन यात्रा वह पैदल कैसे पूरी करेगा और उस पहाड़ तक सही सलामत कैसे पहुँचेगा ?

लेकिन अब यहाँ तक इतनी आसानी से पहुँचने के बाद उसके दिल को यह समस्या व्याकुल बना रही है कि उस शंख को कैसे प्राप्त किया जाये ?

अब उसका अगला क़दम क्या हो ? इस उलझन को सुलझाने में चंद्रवर्मा का दिमाग लगा हुआ था कि अकस्मात् कानों के पर्दे फाड़ने वाली भयानक चिल्लाहट उसे सुनाई दी। चंद्रवर्मा चौंक उठा।

अभी उस आवाज़ की गूँज समाप्त भी न हुई थी कि दिल को दहला देनेवाली वही चिल्लाहट फिर गूँज उठी। इस बार चंद्रवर्मा ने पहचान लिया कि निश्चय ही यह भयानक कर्कश आवाज़ अग्निपक्षी की है, जो चारों तरफ़ फैले घने वृक्षों के इस झुंड में से आ रही है।

पिछली रात जब गरुड़पक्षी आपस में बात कर रहे थे, तब उन्हें सारी योजना समझाकर उड़ने से पहले अग्नि पक्षी इसी तरह चिल्लाया था।

इस आवाज़ के आधार पर चंद्रवर्मा को पक्का निश्चय हो गया कि वह मांत्रिक शंखु के निवास-स्थान के बहुत क़रीब है।

उसे शंका हुई कि शंखु अथवा उसके अनुचरों को अगर उसका हलका सा भी सुराग लग गया तो उस की जान ख़तरे में पड़ जायेगी

तत्काल उसे स्मरण आया कि अग्निपक्षी तो दिन के समय दिखाई नहीं देता। कम से कम दिन के समय उसे उस पक्षी से कोई ख़तरा नहीं हो सकता। पर शंखु के अन्य सेवक भी तो होंगे ! वे तो उसे हानि पहुँचा सकते हैं ?

शंखु के सेवकों से अपने को कैसे बचाये जाये ! उनपर कैसे विजय प्राप्त की जाय ! न मालूम वे किस रूप में उसके सामने आ जायेंगे। उनकी पहचान कैसे हो सकती है !

चंद्रवर्मा इन आशंकाओं से भयभीत हो रहा था, फिर भी उसने दुस्साहस करने का निश्चय कर लिया। उसने अपने मन को समझाया कि भविष्य में घटित होने वाले किसी ख़तरे की आशंका से उसे पहले से ही इतना व्याकुल नहीं होना चाहिए।

उसे सावधान रहना चाहिए, पर भयभीत नहीं होना चाहिए। इस संकल्प से चंद्रवर्मा के मन में अपार साहस भर गया और शरीर में असाधारण बल आ गया।

चंद्रवर्मा को अचानक महसूस हुआ कि वह बहुत भूखा है। वह वन में कुछ फलों की तलाश करने लगा। उसे कुछ मीठे और स्वादिष्ट फलों के पेड़ दिखाई दिये। उसने खूब पेट भर कर फल खाये और फिर एक झरने का शीतल जल पिया।

इसके बाद चंद्रवर्मा एक ऊँचे वृक्ष पर चढ़ गया। वह उसकी घनी डालों के बीच निर्भय होकर लेट गया और रात्रि के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा।

अन्धकार फैलने पर ही मांत्रिक शंखु के पहाड़ पर चढ़ना ठीक होगा, दिन में जाना अधिक ख़तरनाक है, चंद्रवर्मा ने अपने मन में निर्णय कर लिया।

यात्रा की थकान और अनेक उतार-चढ़ावों से गुज़रने के कारण चंद्रवर्मा शीघ्र ही निद्रा की गोद में सरक गया।

सूरज आसमान पर चढ़ आया था, तब भी उस पर धूप का असर नहीं हुआ, क्योंकि वह घनी टहनियों के बीच पत्तों की छाया में लेटा

हुआ था ।

धीरे-धीरे सूर्यास्त भी हो गया, चारों तरफ़ अंधेरा फैल गया, पर चंद्रवर्मा उसी तरह गहरी नींद सोता रहा ।

अचानक आधी रात चंद्रवर्मा की आँखें खुलीं । चारों तरफ़ अंधेरा देख वह चौंक उठा । पास के सरोवर से छोटी-छोटी लहरों के उठने-गिरने की आवाज़ आ रही थी ।

हवा के झोंकों से पेड़ों की शाखाएँ आपस में रगड़ खाकर किर्र-किर्र की आवाज़ें कर रही थीं । कहीं किसी प्राणी का आवागमन नहीं था ।

"लगता है, बड़ी रात हो गयी है । अपना काम संपन्न करने का यही एक अच्छा मौक़ा है । शंखु के पूजागृह से शंख ले आने के लिए मुझे इसी समय चलना चाहिए ।"—

इस तरह सोचता हुआ चंद्रवर्मा पेड़ से उतर आया । अंगड़ाई लेकर अपनी सुस्ती उतारी और म्यान के भीतर की तलवार पर एक निगाह मारकर वह वहाँ से निकल पड़ा ।

चंद्रवर्मा उस घुप्प अंधेरे में रास्ते में ज़मीन को छू रही डालों और छोटी-मोटी झाड़ियों को हटाता हुआ पहाड़ की तरफ बढ़ने लगा । उस घने अन्धकार में उसकी आँखें अग्निपक्षी को ढूंढ़ रही थीं ।

उसके मन में शुरू से ही यह आशंका घर कर गयी थी कि अगर उसे किसी से ख़तरा हो सकता है तो वह अग्निपक्षी से ही ।

उसके मन में यह विश्वास जम गया कि अगर इस वक्त वह पक्षी आसपास न हुआ तो वह सुरक्षित रूप में शंखु के मंत्र-गृह में प्रवेश करके शंख चुरा लायेगा ।

चंद्रवर्मा पहाड़ की तलहटी में पहुँचने ही वाला था कि उसे पास ही कहीं से किसी के कराहने की आवाज़ सुनाई दी ।

किसी ने उसे धीमी और कमज़ोर आवाज़ में पुकारा, 'चंद्रवर्मा' !

चंद्रवर्मा तुरन्त उस आवाज़ को पहचान गया । वह 'कापालिनी !' 'कापालिनी' कहकर उस पुकार की दिशा में द्रुतगति से आगे बढ़ा ।

(क्रमशः)

वर की परीक्षा

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़ पर से शव उतारा और उसे कंधे पर डालकर हमेशा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा, "राजन्, मेरे मन में यह शंका हो रही है कि आप इस अर्धरात्रि के समय जो इतना श्रम उठा रहे हैं, वह आपके अपने स्वार्थ के लिए है या परोपकार के निमित्त से है ? यदि आपके अपने स्वार्थ के लिए है तो आप अपने हाथ लगी सफलता को कृतवर्मा की भाँति दूसरों के हाथ मत छोड़ दीजिएगा। मैं आपको एक कहानी सुनाता हूँ, श्रम को भुलाने के लिए सुनिये !"

बेताल ने कहानी सुनाना प्रारम्भ किया:

कृतवर्मा अभी युवक ही था कि वह स्वर्णपुर के सिंहासन पर बैठा। एक बार की बात है कि वह जंगल में शिकार खेलने गया और रास्ता भटक गया। थोड़ी देर बाद उसे बड़ी प्यास

बेतालकथा

लगी। तभी उसकी निगाह एक भील युवती पर पड़ी। वह अनुपम सुन्दरी थी। उसकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर कृतवर्मा अपनी प्यास की बात भूल गया और निर्निमिष दृष्टि से उसे ताकने लगा। भील युवती भी कृतवर्मा की ओर एकटक दृष्टि से देखती रह गयी।

कुछ क्षणों बाद कृतवर्मा संभल गया। उसने भील युवती को इशारे से बताया कि उसे बहुत प्यास लगी है। भील युवती कमल के पत्ते के दोने में पानी भर लायी और अपने पिता को भी साथ लिवा लायी। भील युवती के पिता ने कहा, "भद्रपुरुष, वेशभूषा से ऐसा लगता है कि आप राजवंशी हैं। मैं यहां का भील सरदार वीरसिंह हूँ। यह मेरी बेटी है, नाम है कमलिनी आप अपना परिचय देने की कृपा करें !"

राजा कृतवर्मा ने अपना परिचय देकर कहा, "वीरसिंह, मैं तुम्हारी पुत्री कमलिनी को प्रेम करता हूँ। तुम अपनी स्वीकृति दो तो मैं इसके साथ विवाह करके इसे अपने राज्य में ले जाऊँगा। यह मेरे स्वर्णपुर राज्य की महारानी होगी !"

भील सरदार ने उत्तर दिया, "मैं भील वंश का राजा हूँ। मेरी पुत्री के साथ विवाह करने वाले को यहीं रहकर भील राज्य पर शासन करना होगा।"

राजा वह भील युवती को पाने के लिए सभ्य समाज को त्याग कर इन जंगली लोगों के बीच निवास नहीं कर सकता था। वह सोच में पड़ गया। तब कमलिनी ने अपने पिता से कहा, "पिताजी, मुझे थोड़ी देर के लिए राजा से बात करने की अनुमति दीजिए।"

भील सरदार ने स्वीकृति दी। कमलिनी राजा कृतवर्मा को कुछ दूर ले जाकर बोली, "महाराज, आप इस विवाह को स्वीकार कर लीजिए ! जब आप यहाँ के राजा बन जायेंगे, तो आप यहाँ की शासन-व्यवस्था किसी अन्य को सौंपकर मुझे अपने राज्य में ले जाइयेगा !"

कमलिनी की बुद्धिमत्ता पर राजा को थोड़ा आश्चर्य हुआ। साथ ही उसके मन में यह दृढ़ विश्वास हो गया कि वह भी उससे प्रेम करती है। राजा ने वीरसिंह से कहा, "मैं तुम्हारी बेटी के साथ विवाह करने के लिए तैयार हूँ।"

"अच्छा तो मैं 'वर की परीक्षा' का प्रबन्ध कर देता हूँ।" भील सरदार ने कहा।

"वर की परीक्षा कैसी ?" कृतवर्मा ने विस्मित होकर पूछा।

"भीलों में यह प्रथा है कि किसी ख़ास भील युवती के साथ विवाह की इच्छा रखनेवाले युवकों के बीच मल्लयुद्ध की प्रतियोगिताएँ होती हैं। उनमें जो सर्वप्रथम निकलता है उसी के साथ भील युवती का विवाह होता है।" भील सरदार ने कहा।

राजा कृतवर्मा ने इस शर्त को मान लिया।

दूसरे दिन प्रतियोगिता आरंभ हुई। कमलिनी के साथ विवाह करने की इच्छा से कुल बारह युवक सामने आये। भील सरदार ने इन्हें दो दलों में बाँट दिया। कृतवर्मा ने अपने वर्ग के सभी युवकों को पराजित किया। दूसरे वर्ग में दीपसिंह नाम के एक युवक ने अपने सारे प्रतिस्पर्धियों को हरा दिया। अब दोनों विजयी युवकों के बीच प्रतियोगिता आरंभ हुई।

दीपसिंह मल्लविद्या के अनेक मर्मों को जानता था। उसने कुछ ही देर में बिना अधिक श्रम के कृतवर्मा को हरा दिया। राजा के पराजित होते ही कमलिनी ने प्रसन्नता पूर्वक तालियां बजाकर दीपसिंह का अभिनन्दन किया। कृतवर्मा को यह बात अपमानजनक लगी।

लेकिन थोड़ी देर बाद कमलिनी एकान्त में राजा से मिलने आयी और बोली, "महाराज, आप अपने को किसी देश का राजा बताते हैं। आप अपनी सेना के साथ हमला करके क्यों नहीं मुझे जीत कर ले जाते ?"

कृतवर्मा ने अपनी राजधानी स्वर्ण पुर पहुँच कर अपने दरबारी मल्लयोद्धा अजयभट्ट को बुलाया और कहा, "तुम मल्लविद्या में मुझे ऐसा प्रशिक्षण दो कि कोई मेरी बराबरी न कर सके !"

अजयभट्ट ने कृतवर्मा को एक महीने के अन्दर मल्लविद्या का पूरा अभ्यास किया। इसके बाद वह दो सौ कुशल सैनिकों को साथ लेकर भील सरदार की बस्ती में पहुँचा। उसने भील सरदार से कहा, "देखो वीरसिंह, यदि मैं चाहूँ तो तुम्हारी पुत्री को जबर्दस्ती ले जा सकता हूँ। पर मैं ऐसा नहीं करना चाहता। इसलिए

''महाराज, मैं दीपसिंह से प्रेम करती हूँ। मैं जानती हूँ कि अब वह मल्लविद्या में आपको पराजित नहीं कर सकता। उस समय मैंने उसे वर-परीक्षा के लिए इसलिए प्रोत्साहित किया था कि उसकी प्रवीणता को एक देश का राजा पहचान ले। उस समय जैसा मैंने सोचा था, वैसा ही हुआ।''

''तब तुमने मुझे यह सलाह क्यों दी कि मैं सेना के साथ आकर तुम्हें जीतकर ले जाऊँ ?'' कृतवर्मा ने चकित होकर पूछा।

कमलिनी कुछ क्षण मौन रहकर बोली, ''एक देश का राजा मुझसे प्रेम करे, मुझे अपने देश की रानी बनाना चाहे, यह मेरे लिए गर्व की बात थी। फिर वह मुझे जीतने के लिए सेना लेकर आजाये, यह मेरे लिए और भी गर्व की बात थी। इस पर भी मैं उस राजा को अस्वीकार कर दीपसिंह के साथ ही विवाह करना चाहूँ तो दीपसिंह समझ जायेगा कि उसके प्रति मेरा प्रेम कितना गहरा है—यही सब सोचकर मैंने आपसे ऐसा कहा था। लेकिन इस दूसरी 'वर-परीक्षा' में आपने उसे हराकर मेरी आशाओं पर पानी फेर दिया है।''

कृतवर्मा को कमलिनी के प्रति बड़ी सहानुभूति हुई। उसने वीरसिंह से कहा, ''सरदार, तुम अपनी बेटी की शादी दीपसिंह के साथ कर दो। मैं सदा तुम्हारा मित्र रहूँगा।''

''राजन्, आप वर-परीक्षा में विजयी हुए हैं। हमारे रिवाज के अनुसार मेरी बेटी के साथ

'वर की परीक्षा' के लिए फिर से मल्लयुद्ध का प्रबन्ध करो !''

भील सरदार ने तत्काल प्रतियोगिता का प्रबन्ध किया। इस बार कृतवर्मा ने दीपसिंह को बड़ी आसानी से हरा दिया। दीपसिंह के हार जाने पर कमलिनी के चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ खिंच गयीं। कृतवर्मा को फिर विस्मय हुआ। उसने कमलिनी से पूछा, ''पिछली बार जब दीपसिंह जीत गया था तो तुमने तालियां बजाकर अपनी खुशी प्रकट की थी। मैंने सोचा था कि वीरों का अभिनन्दन करने की तुम्हारी आदत है। अब दीपसिंह के हारने पर और मेरे जीतने पर तुम दुखी क्यों हो रही हो ?''

सुनकर कमलिनी ने दीनतापूर्वक उत्तर दिया,

आपको ही विवाह करना होगा।" भील सरदार ने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी।

कृतवर्मा मुस्कराकर बोला, "वर-परीक्षा कभी की समाप्त हो गयी। उस समय मैं हार गया था। स्त्रियों के लिए वर-परीक्षा केवल एक बार ही होती है।" यह कहकर राजा अपनी राजधानी लौट गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर विक्रमार्क से कहा, "राजन्, कृतवर्मा वर-परीक्षा में विजयी हुआ, फिर भी उसने भील युवती कमलिनी के साथ विवाह क्यों नहीं किया? वीरसिंह को पराजित करने के लिए और कमलिनी के साथ विवाह करने के लिए ही तो कृतवर्मा ने राजधानी लौटकर एक माह तक मल्लविद्या का अभ्यास किया था? फिर भी उसने हाथ आयी भीलपुत्री को छोड़ दिया। अगर आप इसका समाधान जानकर भी नहीं देंगे तो आपका सिर फूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "वर-परीक्षा केवल एक बार ही होती है, यह बात कृतवर्मा ने भील सरदार को बता भी दी थी। एक राजा का एक भील युवक के हाथ से पराजित हो जाना अत्यन्त अपमान की बात है। इसीलिए कृतवर्मा ने अत्यन्त लगन से मल्लविद्या का अभ्यास कर भील युवक दीपसिंह के साथ पुनः स्पर्धा में भाग लिया। दूसरी बार कृतवर्मा वर-परीक्षा नहीं बलपरीक्षा के लिए गया था। इसका एक कारण है। भील युवक दीपसिंह अपनी प्रेमिका कमलिनी को पाने के लिए ही राजा के साथ प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार हो जाता है, यह प्रमाणित करने के लिए नहीं कि वह राजा से भी ज़्यादा बलवान है। अगर दीपसिंह को यह मालूम हो जाता कि राजा केवल अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए आया है तो शायद केवल विजय पाने के लिए वह इतनी लगन से मल्लयुद्ध नहीं लड़ता। इसलिए यह कहना न तो सत्य है और न संगत ही कि कृतवर्मा ने हाथ लगी विजय के फल को दूसरे को सौंप दिया।"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ गायब होकर फिर पेड़ पर जा बैठा।

दो ठग

सिंभा नगर में दाऊद नाम का एक सौदागर रहता था। वह अपना माल ऊंटों पर लाद लेता और गाँवों में घूम-घूमकर व्यापार करता। दाऊद अत्यन्त ईमानदार था। इस वजह से लोगों के बीच उसका अच्छा नाम था। दाऊद के कई दोस्त भी थे।

सिंभा नगर में ही दो ठग भी रहते थे—सलीम और अलम। वे दोनों भोलेभाले लोगों को मीठी-मीठी बातों से फुसलाकर उन्हें ठग लेते थे। दाऊद की भलमनसाहत का उन्हें पता चला, तो दोनों ने उसे धोखा देकर ठगने की योजना बनायी।

एक दिन की बात है, दाऊद ने अपना माल ऊँट पर लादा और व्यापार करने के लिए दूसरे शहर के लिए चल पड़ा। दाऊद को सफर पर जाते देख सलीम और अलम ने सोचा कि दाऊद को ठगने का यह अच्छा मौक़ा है। उन दोनों ने दो ऊंटों पर घटिया कपड़ों के गट्ठर लादे और दाऊद के पीछे-पीछे चल पड़े।

दोपहर हुई तो दाऊद आराम करने के लिए एक पेड़ की छाया में बैठ गया। उसी वक्त दोनों ठग भी वहाँ आ पहुँचे और दाऊद को सलाम करके दाऊद की बगल में बैठ गये। उन्होंने दाऊद की कुशल-क्षेम पूछी और फिर उसकी तारीफ़ करते हुए बोले, "आप जैसे अनुभवी सौदागर से अचानक ही हमारी मुलाक़ात होगयी। सचमुच ही हमारी खुशक़िस्मती है। अभी हम नयें व्यापारी हैं। इस यात्रा में आप ही हमारा मार्गदर्शन और हमें मदद करने की मेहरबानी कीजिएगा।"

दाऊद ने सपने में भी नहीं सोचा था कि ये ठग हैं। उसने उनकी बातों पर हामी भरी और मंद-मंद मुस्कराता बैठा रहा।

धूप की तेज़ी कम होते ही तीनों वहाँ से निकल पड़े और शाम को शहर की सीमा पर पहुँच गये। वहीं सड़क के किनारे एक सराय

'अरब की रातों' से एक कहानी

थी। तीनों ने वहाँ रात बिताने का निश्चय किया।

दाऊद ने अपने ऊँट को सराय के पास वाले एक खंभे से बाँध दिया। सलीम और अलम ने भी अपने कपड़े के गट्ठरों को सराय के एक कमरे में पहुँचा दिया और ताला लगाकर दाऊद से बोले, "जनाब, चलिये। हम तीनों पास के भोजनालय में चलते हैं। वहाँ खाना खाकर लौट आयेंगे।"

सराय से भोजनालय के लिए एक छोटा रास्ता था, जो झाड़ियों के बीच से होकर जाता था। वह रास्ता हमेशा सुनसान रहता था। इसलिए ठगों ने यह योजना बनायी थी कि खाना खाने के बाद वहाँ से लौटते वक्त दाऊद का गला घोंटकर मार देंगे और उसका क़ीमती माल अपने ऊंटों पर लादकर भाग जायेंगे।

दाऊद बोला, "इस वक्त मुझे भूख नहीं है। वैसे भी मेरे पास एक बड़ी रोटी बची हुई है। कुछ देर बाद मैं उसी को खा लूँगा। तुम दोनों खाना खाकर आ जाओ!"

दाऊद का जवाब सुनकर दोनों ठगों को थोड़ी निराशा तो हुई, फिर भी वे यह सोचकर खाने के लिए चल पड़े कि शायद कल तक उन्हें एक मौक़ा और मिल जाये। उन्होंने सराय के मालिक से जानकारी ली, तो उसने उन्हें दो भोजनालयों का पता बताया, जो वहाँ से एक पूरब में था और दूसरा पश्चिम में। दोनों में ही अच्छा खाना मिलता था।

सलीम ने अलम से कहा, "अलम, तुम पूरब वाले भोजनालय में जाकर कोई अच्छी चीज़ ख़रीद लाओ, मैं पश्चिमी दिशा वाले
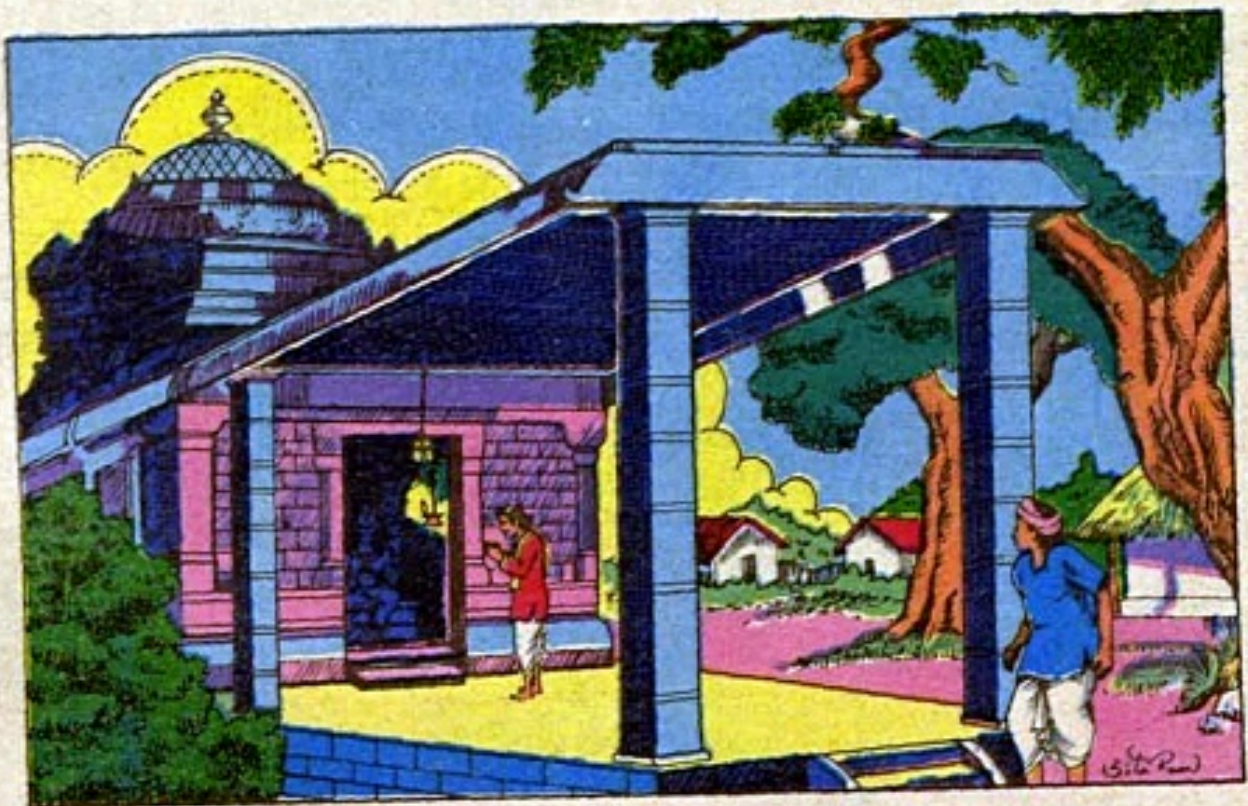
भोजनालय से अच्छी चीजें ख़रीद लाता हूँ।"

"यह तो बहुत ही अच्छा सोचा तुमने !" अलम ने खुश होकर सलीम से कहा।

इसके बाद वे दोनों दो अलग दिशाओं में गये और खाना लेकर लौट आये।

"तुम क्या लाये हो ?" सलीम ने पूछा।

"रोटी और दूध लाया हूँ।"

"अरे, मैं भी रोटी और दूध ही लाया हूँ।" सलीम ने थोड़ा आश्चर्य प्रकट कर कहा।

"तो हम एक काम करें। मैं जो रोटी और दूध लाया हूँ, उन्हें तुम खा लो और जो तुम लाये हो, उन्हें मैं खा लेता हूँ।" अलम ने कहा।

"वाह, क्या बात है ! मैं भी यही कहना चाहता था।" सलीम मुस्करा कर बोला।

दोनों ज़मीन पर बैठकर एक-दूसरे की लायी हुई रोटी-दूध खाने लगे।

थोड़ी देर बाद दोनों कै करने लगे और ज़ोर-ज़ोर से कराहने लगे। शोरगुल सुनकर सब लोग वहाँ पर दौड़े आये। दोनों ठगों ने एक-दूसरे की तरफ़ उंगली का इशारा किया और छटपटा कर वहीं दम तोड़ दिया।

वास्तव में, उन दोनों ठगों ने एक सा ही विचार किया था। जब वे खाना लाने के लिए अपनी-अपनी दिशा में निकले तो दोनों ने अपने मन में सोचा कि दाऊद का माल चुराने के बाद दूसरे को भी उसमें से हिस्सा देना पड़ेगा। इसलिए दोनों ने दूध में ज़हर मिलाया और इस तरह दोनों ही अपनी जान से हाथ धो बैठे।

दोनों मित्रों की मौत से दाऊद बहुत दुखी हुआ। थोड़ी देर बाद सराय में कुछ और सौदागर आगये। दाऊद ने उनसे सलीम और अलम की अचानक मौत का समाचार सुना कर कहा, "बेचारे ! ये हमारे ही शहर के सौदागर थे!"

सौदागरों ने उन दोनों की लाशें देखीं तो उन्हें पहचान लिया और दाऊद से कहा, "भाईजान, ये दोनों सौदागर नहीं, हमारे शहर के मशहूर ठग हैं। हत्याएं भी करते हैं।" उन्होंने दाऊद को सारा किस्सा सुनाया।

सारा वृत्तान्त सुनकर दाऊद ने मन ही मन ईश्वर को धन्यवाद दिया।

बुद्धिमती पत्नी

वीरमपुर शहर में केशव गुप्त नाम का एक व्यापारी रहता था। एक बार वह एक लंबी बीमारी का शिकार हो गया। उसे बिस्तर पर असहाय पड़ा देख कर उसके कर्मचारियों की बन आयी। उन्होंने गलत हिसाब करके उसकी सारी संपत्ति हड़प ली और केशवगुप्त उनके धोखे का शिकार हो गया। अब इलाज के लिए उसे घर की क़ीमती चीज़ें और पत्नी के गहने तक भी बेच देन पड़े। वह स्वस्थ तो हो गया, लेकिन उसके पास फूटी कौड़ी भी शेष न रही।

ऐसी दीन-हीन अवस्था में भी केशवगुप्त हिम्मत नहीं हारा। उसने सोचा, वह अपने किसी मित्र से सौ रुपया उधार ले लेगा और फिर से कोई व्यापार शुरू कर देगा। वह अपने बचपन के एक मित्र जगदीप के यहाँ पहुँचा।

जगदीप ने केशवगुप्त का स्वागत किया। केशव ने अपनी सारी स्थिति जगदीप के सामने रखकर कहा, "भाई जगदीप, अगर तुम इस समय मुझे सौ रुपये का ऋण दे दो, तो बड़ा उपकार होगा!"

जगदीप बोला, "केशव भाई, नारियल के पेड़ से नारियल तोड़कर उसका व्यापार करनेवाला आदमी अगर कभी नारियल के पेड़ से गिर कर अपने हाथ-पैर तोड़ लेता है, तो फिर से पेड़ पर चढ़ने का प्रयत्न नहीं करता। वह किसी दूसरे व्यवसाय का अवलम्ब लेने की कोशिश करता है।"

केशवगुप्त ने जगदीप की बात में छिपे व्यंग को समझ लिया। उसे गुस्सा तो बहुत आया, लेकिन किसी तरह अपने पर नियंत्रण रख वह बोला, "एक बार हुए नुक़सान से डर कर जो आदमी ऐसा करता है, वह अव्वल दर्जे का कायर है। फिर मेरे तो हाथ-पैर भी नहीं टूटे हैं। मैं तुम्हें एक बात बता दूँ, अगर पेड़ पर चढ़ने से मुझे कोई ख़तरा पैदा हुआ है, तो मैं दूसरी

घनश्याम वर्मा

बार अत्यन्त सावधानी बरत कर पेड़ पर चढ़ूँगा, ताकि नुक़सान की गुंजाइश ही न रहे। लेकिन, इसके लिए मैं अपना काम नहीं छोड़ूँगा।''

केशव गुप्त का तेज़ जवाब सुनकर जगदीप मन मसोस कर रह गया। फिर भी, ऊपर से प्रसन्न भाव का अभिनय करते हुए बोला, ''केशव, बात तो तुमने बड़े पते की कही। लेकिन भाई, इस समय मेरे व्यापार की स्थिति सन्तोष जनक नहीं है। एक तरफ़ कर्ज़ चुकाने के लिए साहूकारों की तरफ़ से दबाव आ रहा है, दूसरी तरफ़ जिनसे मुझे रुपये मिलने हैं, वहाँ से कोई वसूली नहीं हो पा रही है। ऐसे संकट की स्थिति में मैं तुम्हें सौ रुपये उधार नहीं दे सकता। ये पाँच रुपये ले लो, इन्हें उधार मत समझना।''

इस घटना से केशव को अपने मित्र का वास्तविक रूप समझ में आ गया। उसने जगदीप से पाँच रुपये ले लिये और दूसरे तीन मित्रों के यहाँ उधार के लिए गया। उनसे भी केशव ने सारा हाल कहा। उन मित्रों ने भी अपने सुख-दुख के किस्से कह कर अंत में पाँच रुपये केशव के हाथ में रख दिये और यह कह कर उसे विदा किया कि ये रुपये उधार नहीं हैं, इसलिए वापस करने की कोई ज़रूरत नहीं है।

केशव समझ गया कि उसे अपनी ऐसी दरिद्र स्थिति में कहीं से भी उधार मिलना संभव नहीं है। वह अपने घर लौट आया और अपनी पत्नी सरला से अपने मित्रों की राम कहानी कह सुनायी।

मित्रों के व्यवहार के बारे में सुनकर सरला को आश्चर्य भी हुआ और दुख भी हुआ। वह अपने पति से बोली, ''इतने बड़े शहर में क्या तुम्हारे सिर्फ़ चार ही दोस्त हैं? आप तो यहीं पैदा हुए, यहीं पले-बढ़े और अनेक वर्षों से व्यापार भी यहीं किया। क्या आपके कोई और दोस्त नहीं हैं?''

केशवगुप्त थोड़ी देर सोचता रहा। फिर लंबी साँस लेकर बोला, ''दोस्त क्यों नहीं हैं? मेरे बचपन के दोस्त, व्यापार में लेने-देन के कारण संपर्क में आये हुए दोस्त, मित्रों के द्वारा बने हुए दोस्त—इस तरह कुल मिलाकर चालीस-पचास तो अवश्य होंगे। पर उनसे क्या

होना है ?''

''अच्छा तो आप मुझे उनके नाम और पते लिख कर दीजिए !'' सरला बोली ।

''इससे क्या फ़ायदा होगा ? तुम, वास्तव में, करना क्या चाहती हो, यह बताओ !'' केशव गुप्त ने कुछ भी न समझते हुए पूछा ।

''मैं कुछ नहीं करूँगी । जो कुछ करना है, वह हमारा बेटा हरिगुप्त करेगा ।'' सरला ने कहा । रात को केशव गुप्त ने अपने सभी मित्रों के नाम, पते याद किये और एक कागज़ पर पूरी सूची बनाकर पत्नी के हाथ में वह कागज़ दे दिया ।

इस समय हरिगुप्त की आयु चौदह वर्ष की थी । दूसरे दिन सरला ने उसे बुलाया और वह कागज़ उसके हाथ में रखकर बोली, ''देखो, बेटे, इस कागज़ पर जिन लोगों के नाम लिखे हैं, तुम उनके पास जाओ और उनसे कहो कि तुम्हारे पिताजी ने तुम्हें सौ रुपया उधार माँगने के लिए भेजा है । अगर उनमें से कोई भी रुपया उधार देने को तैयार हो तो कहना कि पिताजी स्वयं आकर उधार की रक़म ले लेंगे ।''

सुबह का निकला निकला हरिगुप्त शाम को घर लौटा । उसके हाथ में रुपयों की भरी हुई थैली थी । रुपयों की थैली देखकर केशवगुप्त को बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने अपने बेटे से पूछताछ की तो उसने जवाब दिया, ''पिताजी, आपका कोई भी मित्र सौ रुपये उधार देने की स्थिति में नहीं है । लेकिन सभी ने दस-पाँच रुपये देकर यह शुभकामना प्रकट की कि आप फिर से अपनी पहले जैसी स्थिति प्राप्त करें । सबने यह भी कहा कि ये रुपये लौटाने की कोई ज़रूरत नहीं है ।''

केशवगुप्त समझ गया कि उसकी पत्नी सरला ने अपनी बुद्धिमत्ता दिखाकर उसे इस संकट की घड़ी में उबार लिया है ।

इसके बाद उन्होंने थैली के रुपये गिने तो कुल मिलाकर चार सौ दस रुपये थे ।

उस धन से केशवगुप्त ने एक छोटा-सा व्यापार शुरू किया और पाँच-छह वर्षों के अंदर अपनी पहली जैसी स्थिति प्राप्त कर ली ।

वैराग्य

जिन दिनों काशी राज्य पर राजा ब्रह्मदत्त का शासन था, उन दिनों विदेह राज्य की राजधानी मिथिला में राजा महाजनक शासन करते थे। उनके दो पुत्र थे— अरिष्टजनक और पोल जनक। महाजनक की मृत्यु के बाद अरिष्टजनक का राज्याभिषेक हुआ। उन्होंने अपने छोटे भाई पोल जनक को युवराज बनाया एक दिन उनके गुप्तचरों ने उन्हें सूचना दी कि युवराज पोल जनक उनका वध करके राजा बनना चाहता है। महाराजा अरिष्टजनक ने अपने गुप्तचरों की बात का विश्वास नहीं किया, इसलिए पोलजनक ने कुछ योद्धाओं का संगठन किया और अपने सहयोगी योद्धाओं के साथ महाराजा अरिष्टजनक पर आक्रमण करके उनका वध कर डाला।

अरिष्टजनक की मृत्यु के समय उनकी पट्टमहिषी गर्भवती थी। अपने पति की मृत्यु का समाचार मिलते ही महारानी ने अपने आभूषणों और कुछ बहुमूल्य रत्न आदि को एक टोकरी में रखकर उस पर भूसा ढंक दिया। अपना वेश बदल लिया और मैले कुचेले कपड़े पहन कर टोकरी सिर पर रख राजभवन के पिछले द्वार से बाहर निकल गयी और उत्तरी दिशा के द्वार से होकर मिथिला के बाहर निकल गयी। मार्ग में उसे किसी ने नहीं पहचाना।

महारानी को कुछ सूझ नहीं रहा था कि वह क्या करे, कहाँ जाये! उसने कभी सुना था कि आस पास ही कहीं कालचंपा नाम का नगर है। थक जाने पर उसने सिर पर से अपनी टोकरी उतारी और एक पेड़ के नीचे बैठ गयी। रास्ते से गुज़रने वाले हर यात्री को रोकती और दीन स्वर में पूछती, "भाई, कालचंपा नगर जाने का रास्ता कौन-सा है?"

थोड़ी देर बाद एक बूढ़ा बैलगाड़ी पर उधर से निकला। उसने कहा, "बेटी, मैं कालचंपा नगर जा रहा हूँ। तुम्हें कहाँ जाना है?"

रानी ने कातर होकर कहा, "बाबा, मैं भी कालचंपा ही जाना चाहती हूँ ।"

बूढ़ा बोला, "तो आओ, गाड़ी में बैठ जाओ। तुम पूर्ण गर्भवती लगती हो, इसलिए मैं बैलों को धीरे से हाँक लूँगा। तुम्हें झटके नहीं लगेंगे ।"

रानी गाड़ी पर सवार हो गयी। कालचंपा पहुँच कर बूढ़े गाड़ीवान ने रानी को एक चौपाल पर उतार दिया और चला गया। रानी की समझ में न आया कि वह कहाँ जाये ! वह चौपाल के एक कोने में बैठ गयी और रास्ते से गुज़रने वाले हर राहगीर को देखने लगी ।

थोड़ी देर बाद एक ब्राह्मण अपने शिष्यों के साथ नदी में स्नान करने निकला। वह ज्ञानी महात्मा था। उसने चौपाल के कोने में एक गर्भवती स्त्री को बैठे देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने भीतर जाकर रानी से सारा हाल पूछा ।

रानी को अनायास ही उस पुरुष पर विश्वास हुआ। उसने अपना सच्चा परिचय देते हुए कहा, "महानुभाव, मैं मिथिला की रानी हूँ। मेरे पति महाराजा अरिष्टजनक अपने छोटे भाई पोलजनक के षडयंत्र का शिकार होकर मारे गये हैं। मैं एकदम अनाथ हो गयी हूँ। किसी तरह अपने गर्भ की रक्षा के लिए भागकर यहाँ पहुँच गयी हूँ। मेरा कोई भी परिचित नहीं है ।"

"तुम मेरे घर में शरण ले सकती हो। लेकिन इससे पहले तुम्हें एक नाटक रचना

होगा। तुम मेरे पैरों पर गिर कर इस तरह दहाड़ें मार कर रोओ कि बाहर खड़े मेरे शिष्यों के कानों में भी यह आवाज़ सुनाई दे। आगे जो करना होगा, मैं देख लूँगा। मैं तुम्हारा रहस्य सदा के लिए गुप्त रखूँगा और तुम्हारी रक्षा करूँगा ।" उस ब्राह्मण ने रानी से कहा ।

रानी ब्राह्मण के कहे अनुसार उसके पैरों पर गिर कर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। एक स्त्री के रुदन की आवाज़ सुनकर शिष्यगण तुरन्त अन्दर आये और ब्राह्मण से बोले, "गुरुदेव, इन्हें क्या हो गया है ?" इस बीच उस मार्ग से गुज़र रहे अन्य लोग भी वहाँ इकट्ठा हो गये और उस स्त्री के रोने का कारण पूछने लगे ।

ब्राह्मण ने कहा, "यह मेरी सबसे छोटी बहन

है। मेरे गांव छोड़कर चले आने के बाद इसका जन्म हुआ, इसलिए आज तक मैंने इसे देखा नहीं था। पहली बार मिली है, इसीलिए इतना रो रही है।''

ब्राह्मण की बात पर सबने विश्वास कर लिया। ब्राह्मण रानी को अपने घर ले गया। कुछ दिन बाद रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया और उस बालक का नामकरण अपने श्वसुर के नाम पर महाजनक किया। यही महाजनक बोधिसत्व है।

महाजनक धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। उसके साथ खेलनेवाले क्षत्रिय कुमार उसकी अवहेलना किया करते थे, इससे महाजनक के अन्दर प्रतिक्रिया होती थी और वह उन्हें पीट कर भगा देता था। वे बालक रोते हुए अपने घर चले जाते थे और अपने माता-पिता से यह कहकर शिकायत करते थे कि 'उस विधवा के पुत्र ने हमें पीटा है।'

हमेशा 'विधवा का पुत्र' सुनने के कारण एक दिन महाजनक के मन में यह सन्देह हुआ कि उसका पिता कौन है। कुछ दिनों तक तो उसकी मां उससे छिपाती रही फिर महाजनक के हठ करने पर एक दिन उसने सारी कहानी कह सुनायी।

जब महाजनक को यह बात मालूम हुई कि वह राजपुत्र है और उसके चाचा ने षडयंत्र करके उसके पिता का वध किया है और अब उनके राज्य का राजा बना बैठा है तो उसने अपने हृदय में पिता के वध का प्रतिकार लेने और अपने पिता के राज्य को पुनः प्राप्त करने का संकल्प
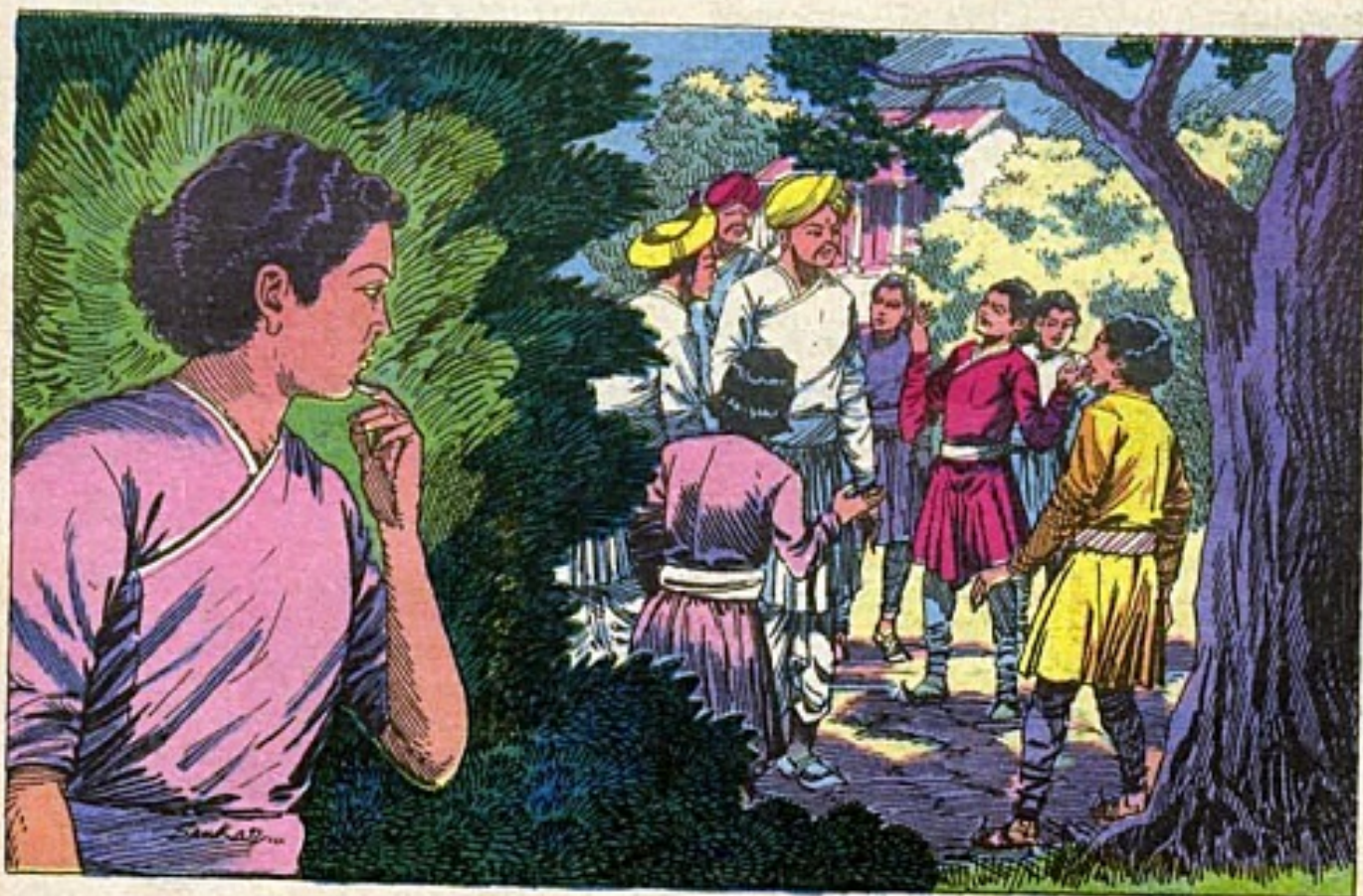
किया। सोलह वर्ष की आयु में उसने अपनी शिक्षा समाप्त कर ली और अपनी मां से बोला, "माँ, मैं विदेह राज्य पर निश्चय ही अधिकार करूँगा। क्या तुम्हारे पास थोड़ी-सी संपत्ति है ?"

रानी ने अभी तक वह टोकरी छिपाकर रखी थी, जिसमें वह अपने आभूषण और रत्नादि लायी थी। उसने वह टोकरी महाजनक को दे दी। महाजनक ने उसमें से सिर्फ़ आधी संपत्ति स्वर्ण आदि साथ लिया और मिथिला के लिए प्रस्थान कर दिया।

जिस दिन महाजनक कालचंपा से निकला था, उसी दिन मिथिला में राजा पोलजनक के बायें अंग को लकवा मार गया और उसने शैया पकड़ ली। जिस क्षण महाजनक ने मिथिलानगर में प्रवेश किया, उसी क्षण राजा पोलजनक का देहान्त हो गया।

पोलजनक के कोई संतान न थी। राज पुरोहित ने एक रथ पर राजमुकुट, राज छत्र, राजदंड और पादुकाएं आदि अन्य राज-चिन्ह रख कर रथ को राज पथ पर हाँकने की आज्ञा दी। अन्य पुरोहित तथा मंत्री रथ के पीछे-पीछे चले। रथ चलता रहा और अंत में वहाँ जाकर ठहर गया, जहाँ उद्यान में महाजनक विश्राम कर रहा था।

राज पुरोहित ने महाजनक को देखते ही पहचान लिया कि वह राजयोग लेकर जन्मा है। उसकी देह पर राज-लक्षण विद्यामान थे। महाजनक को विदेह राज्य का राजा घोषित किया गया। उसका राज्याभिषेक हुआ।

कुछ वर्ष बाद महाजनक ने सीवली देवी -
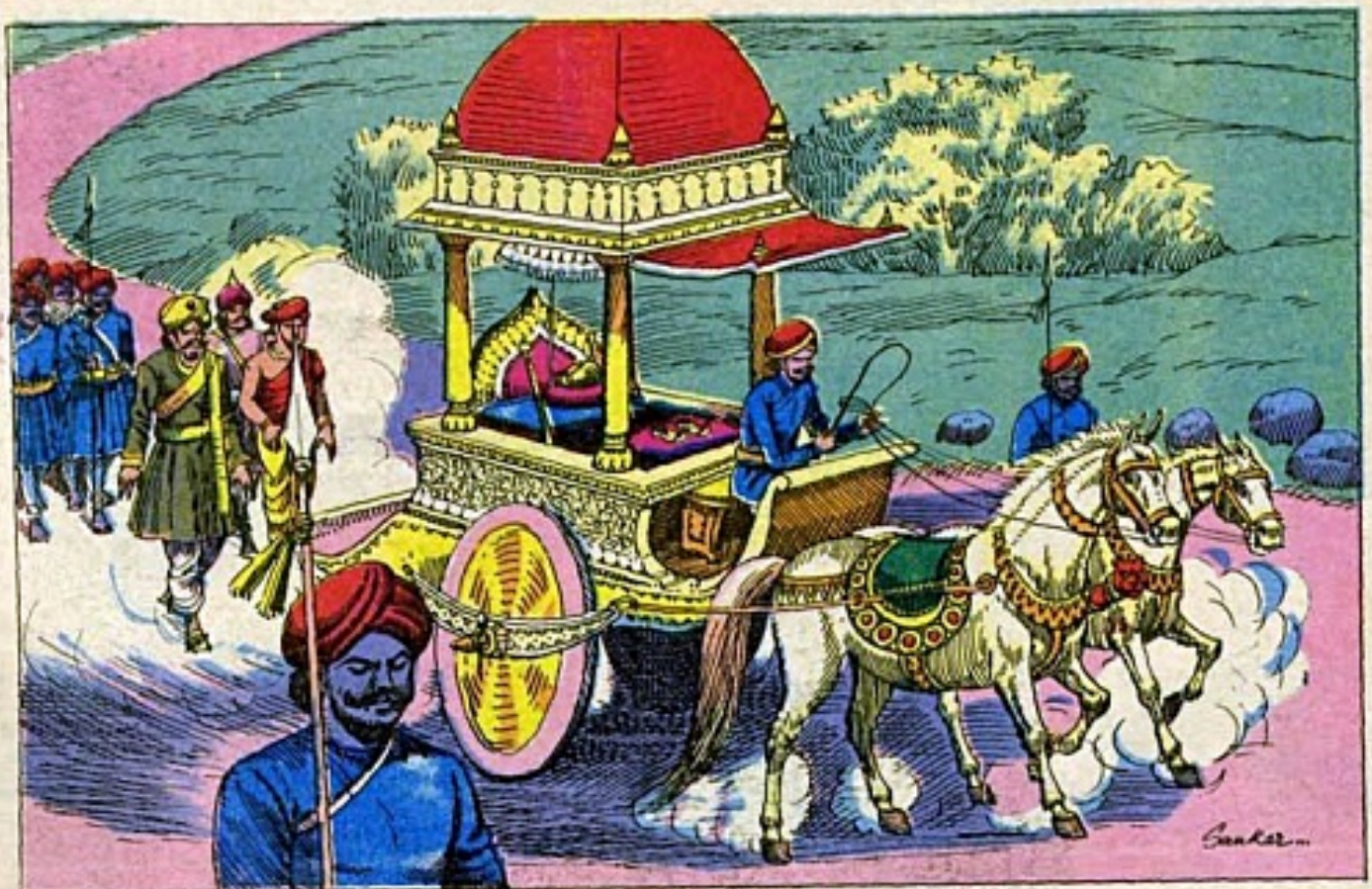
नाम की एक राजकन्या से विवाह किया और अत्यन्त कुशलता से राज्यकार्य देखने लगे। उनके दीर्घायु नाम का एक पुत्र हुआ।

फिर कुछ दिन निकले। एक दिन महाजनक ने वन-विहार की इच्छा प्रकट की। सारी व्यवस्था की गयी। राजा जनक एक सज्जित हाथी पर सवार होकर बन-विहार के लिए निकले। राजा महाजनक ने बीच में एक उद्यान में प्रवेश किया। उन्होंने वहाँ अत्यन्त सुन्दर दो आम्रवृक्षों को देखा। उनमें से एक वृक्ष फल भार से थोड़ा झुका हुआ था। अभी दूसरे वृक्ष पर कोई फल नहीं आया था। राजा ने फलवाले वृक्ष से एक आम तुड़वाकर खाया तो वह उन्हें विशेष रूप से स्वादिष्ट लगा। महाजनक ने अपने मन में सोचा कि लौटते समय वे और अधिक आम्रफल तुड़वाकर खायेंगे।

राजा जैसे ही उद्यान छोड़कर आगे बढ़े कि राजा के साथ आये उनके परिजनों ने भी वह आम्रवृक्ष देखा। उन्होंने वृक्ष को झकझोर कर हिलाया और सारे फल खा लिये। कुछ फल ऊपर से गिरने के कारण नष्ट हो गये। जल्द बाजी में अनेक टहनियां भी टूट गयीं-पत्ते भी झर गये। अभी कुछ ही देर पहले अत्यन्त शोभायमान दिखाई देनेवाला वह वृक्ष उजड़ा हुआ दिखाई देने लगा।

राजा ने वन-विहार किया और जब लौटते हुए सायंकाल में उस उद्यान में आये तो उस उजड़े हुए आम्रवृक्ष को देखकर वे एक दम अवाक् रह गये।

उसकी बगल में खड़ा दूसरा वृक्ष पहले जैसा ही अत्यन्त सुन्दर लग रहा था।

फिर क्या था, महाजनक के हृदय में वैराग्य का उदय हुआ। वे सोचने लगे, "यह मेरे लिए एक अच्छा सबक़ सिखा रहा है ! राज्य का सारा वैभव इस फल वृक्ष के समान है। संन्यास उस दूसरे वृक्ष के समान है, जिसमें फल नहीं लगे हैं। इस को कोई भी छेड़ने का प्रयत्न नहीं करेगा। मैं अपने सारे वैभव को त्याग कर संन्यास ले लूँगा।"

(अगले अंक में समाप्त)
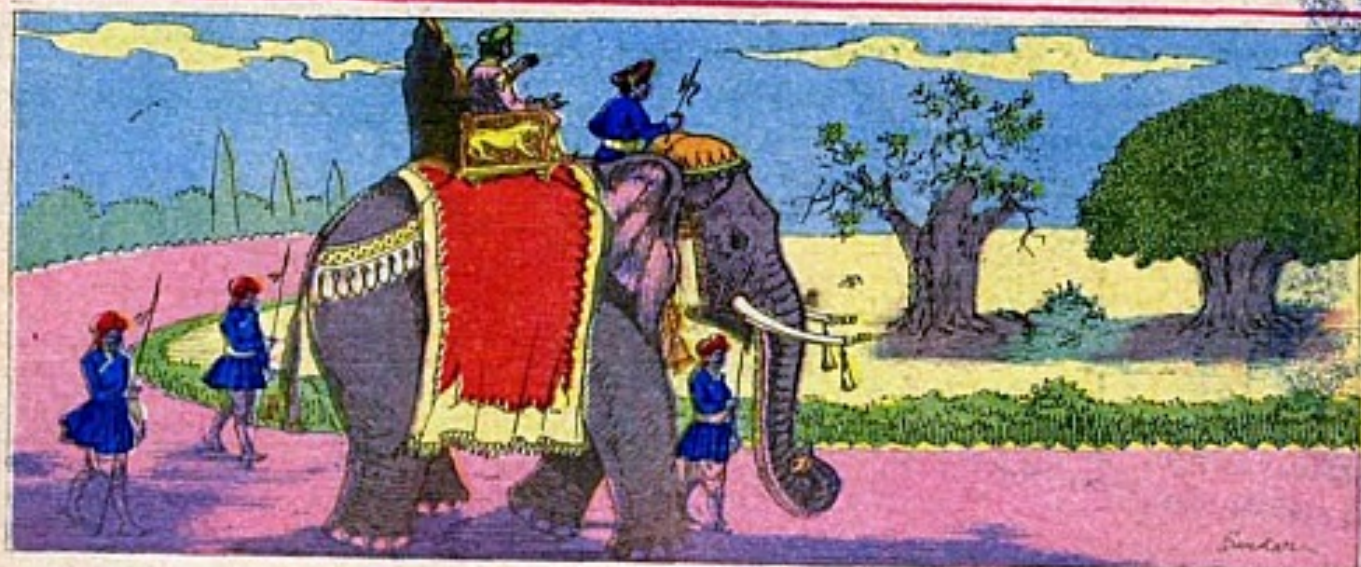
हमारी नदियां

विपाशा

कल्मषपाद एक अभिमानी राजा था। एक दिन वह घोड़े पर सवार होकर वनमार्ग से जा रहा था। वह मार्ग अत्यन्त संकरा था। तभी शक्ति नाम का एक मुनिकुमार उसके सामने आ गया। वह राजा की विपरीत दिशा में जा रहा था। राजा ने उसे आदेश दिया, "मार्ग से हटो और मुझे आगे जाने दो!"

मुनिकुमार शक्ति तेजस्वी और तपस्वी था। उसने राजा से कहा, "साधु-संन्यासियों के प्रति आदर प्रकट करना राजा का कर्त्तव्य है। यह राजधर्म है। इसलिए, तुम बगल से हटकर मुझे रास्ता दे दो!"

मुनिकुमार की बात सुनकर राजा कल्मषपाद क्रोध में आगया। उसने मुनिकुमार को पकड़कर कोड़े से मारा।

राजा कल्मषपाद के इस आचरण पर शक्ति चकित रह गया। वह कुछ संयत हुआ, फिर क्रोधवश उसने शाप दिया, "कल्मषपाद, तू राक्षस प्रकृति का है। तू राजा होने योग्य अथवा राज्य-संचालन करने योग्य नहीं है। मैं तुझे शाप देता हूँ, तू राक्षस हो जा!" दूसरे ही क्षण राजा कल्मषपाद राक्षस के रूप में परिवर्तित होगया।

मुनिकुमार शक्ति महर्षि वशिष्ठ का ज्येष्ठ पुत्र था। विश्वामित्र वशिष्ठ के समकालीन थे और ब्रह्मज्ञानी वशिष्ठ के प्रति परम शत्रुभाव रखते थे। कल्मषपाद के माध्यम से उन्हें वशिष्ठ को हानि पहुँचाने का अच्छा अवसर मिल गया। विश्वामित्र ने राक्षस बने कल्मषपाद में एक दुष्ट प्रेतात्मा का प्रवेश करा दिया। इस दुहरे प्रभाव से कल्मषपाद और भी भयानक हो उठा और उसने एक दिन आश्रम में प्रवेश करके मुनिकुमार शक्ति को गला घोंटकर मार डाला।

कल्मषपाद केवल इतने से ही संतुष्ट न रहा। इस समय महर्षि वशिष्ठ आश्रम में नहीं थे। उसने इसका लाभ उठाया और वशिष्ठ के सभी पुत्रों को मार कर आश्रम को जला डाला।

इस घटना के थोड़ी देर बाद वशिष्ठ अपने आश्रम में लौटे। अपने मृत पुत्रों और भस्मीभूत आश्रम को देखकर वे चकित रह गये। उनके दुख और क्षोभ की कोई सीमा न रही। उन्होंने अपने योगबल से यह तो जान लिया कि यह किसका काम है, पर किसी प्रकार का प्रतिकार लेने का उन्होंने प्रयत्न नहीं किया।

पुत्रों के शोक से पीड़ित वशिष्ठ महर्षि ने अपने प्राण त्यागने का निश्चय किया। वे एक पर्वत के शिखर पर चढ़ गये और उसी समय वहाँ से उद्भव लेनेवाली एक नदी के प्रवाह में कूद पड़े।

वशिष्ठ कूद तो अवश्य पड़े, लेकिन नदी के जल की धारा उन्हें बहाकर नहीं ले गयी। उन्होंने देखा, उनके चारों तरफ़ बिलकुल जल नहीं है और वे मुलायम बालू पर सुरक्षित खड़े हुए हैं। वे समझ गये कि करुणामयी नदी ने मातृभाव से उन्हें बचाने के लिए ऐसा किया है।

वशिष्ठ ने अब भी अपने मृत्यु के निश्चय को नहीं बदला और वे नदी के अन्दर वहाँ तक चले गये, जहाँ पानी बहुत गहरा था। उन्होंने अपने हाथ-पैर बाँधे और पानी की उस धारा में सरक गये।

नदी में गिरते ही उनके सारे बन्धन टूट गये। नदी की धारा ने न केवल उनके सारे बन्धनों को तोड़ डाला, बल्कि शीतल जल से उनकी थकान दूर करके उन्हें आराम पहुँचाया।

उसी समय वशिष्ठ ने देखा कि उनकी बहू, शक्ति की पत्नी नदी के तट पर खड़ी दीनतापूर्वक विलाप कर रही है। वशिष्ठ को स्मरण आया कि वह पूर्ण गर्भवती है और शीघ्र ही उनके कुल की संतान को जन्म देगी। इस संतति के लिए उन्हें जीवित रहना चाहिए, यह सोचकर महर्षि वशिष्ठ नदी की धारा से बाहर आ गये।
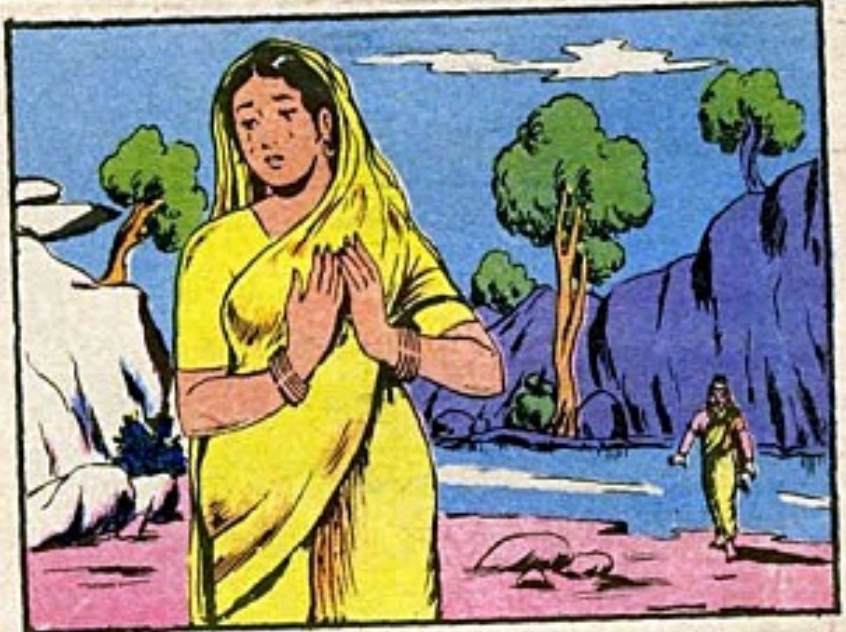
वशिष्ठ ने अनुभव किया कि इस नयी नदी का उनके प्रति मातृतुल्य प्रेम है। वे उसकी अपार दया-करुणा के साक्षी थे। उनका हृदय सहज आनन्द से भर उठा। भक्तों को पाश अर्थात् बन्धन से मुक्त करनेवाली उस नदी को महर्षि वशिष्ठ ने विपाशा नाम दिया। आज भी विपाशा नदी में स्नान करना भक्त लोग अपने लिए भाग्य की बात मानते हैं।

जागरण

जयवर्मा अभी युवक ही था कि उसके पिता की मृत्यु हो गयी। अपने पिता की मृत्यु के बाद जयवर्मा विक्रमपुर का राजा बना। वह बड़ा साहसी था। किसी बात में देरी या लापरवाही हो जाती तो वह सहन नहीं कर पाता था।

एक दिन की बात है। जयवर्मा नगर के राजपथ से होकर उद्यानवन में जा रहा था। उसने देखा, एक गृहस्थ अपने पुत्र को डांटते हुए कह रहा है," अरे मूर्ख, तुझे गुरुकुल में विद्याध्ययन के लिए भेजकर मैंने बड़ी भूल की। तूने पुस्तकीय ज्ञान तो प्राप्त कर लिया, लेकिन तूने व्यावहारिक ज्ञान जरा भी नहीं सीखा। इतना ही नहीं, तू घोर आलसी बन गया है। न तो तू खेतीबारी करने लायक़ रहा और न कोई नौकरी करने लायक़ रहा।"

गृहस्थ का पुत्र सुन्दरलाल पिता की डांट सुनता रहा और उसकी तरफ़ ध्यान दिये बिना चबूतरे पर बैठा कोई पुस्तक पढ़ता रहा।

राजा जयवर्मा ने उस गृहस्थ की परेशानी और उसके पुत्र सुन्दरलाल की उपेक्षा पर विचार किया। गृहस्थ की बातों से उसके मन में यह धारणा बन गयी कि गुरुकुलों में आजकल कुछ नहीं सिखाया जाता और वहाँ के विद्यार्थी इस तरह ही आलसी और अकर्मण्य होते हैं। राजा ने सोचा, अगर इन गुरुकुलों को बंद कर दिया जाये तो राज्य इन निकम्मों की संख्या के बढ़ने के ख़तरे से बच सकता है।

जयवर्मा ने दूसरे ही दिन सारे गुरुकुलों को बंद करने का आदेश ज़ारी कर दिया।

कुछ महीने बीते। एक दिन जयवर्मा का दरबार लगा हुआ था। तभी अधेड़ उम्र का एक आदमी वहाँ आया। उसके चेहरे पर क्रोध की छाया थी। जयवर्मा ने उसे अपनी बात कहने का आदेश दिया।

वह बोला, "महाराज, एक सप्ताह पहले डाकुओं ने मेरे घर को लूट लिया। मैंने उसी

सावित्री निगम

दिन कोतवाल को इस घटना की ख़बर दी और रपट लिखायी। कोतवाल ने मुझे वचन दिया था कि डाकुओं को पकड़ कर मेरा माल वापस कर दिया जायेगा। लेकिन, डाकुओं को पकड़ने का आज तक कोई प्रयत्न नहीं किया गया। जनता को चोर-डाकुओं से बचाने में असमर्थ ये सिपाही किस काम के हैं ? ये कोतवाल किसलिए बैठे हैं ? आप इन लोगों के पीछे हज़ारों रुपया प्रतिमाह वेतन के रूप में खर्च करते हैं। यह सारा धन जनता का है, जो वह कर के रूप में चुकाती है !"

उस दिन रात को जयवर्मा ने रक्षक-दल-विभाग के बारे में गंभीरतापूर्वक विचार किया। उसने सोचा कि जो विभाग चोर-डाकुओं को पकड़ने में असमर्थ है, उसके पीछे इतना धन खर्च करना सचमुच ही मूर्खता है।

जयवर्मा के मन में यह धारणा घर कर गयी कि किसी भी समस्या का हल उसके मूल कारण के उन्मूलन में निहित है। उसने पुलिस-विभाग को तो बंद कर ही दिया, इसके बाद यह सोचकर सेना-विभाग को भी बंद कर दिया कि कभी-कभी होनेवाले युद्ध के लिए-एक ऐसे काम के लिए, जिसके बारे में यह भी मालूम नहीं है कि वह होगा भी या नहीं, बरसों तक सैनिकों को प्रशिक्षण देना, ख़ाली बैठाकर उन्हें वेतन देना व्यर्थ है। इसके अलावा उसने कवियों-कलाकारों को राजाश्रय देने तथा उन्हें पुरस्कार देकर सम्मानित करने की प्रथा को भी अनावश्यक समझा और कहा कि ये सब केवल राजदरबार का अलंकरण मात्र हैं।

इस प्रकार राजा जयवर्मा ने अपने राज्य में अनेक नीति-नियमों को पूरी तरह मिटा दिया। परिणाम स्वरूप राज्य में अराजकता फैल गयी। फिर भी, जयवर्मा ने अपना विचार नहीं बदला। सौभाग्य से राजा जयराम का मंत्री अनन्त मिश्र कुशल राजनीतिज्ञ था और राज्य का सच्चा सेवक था। उसने परिस्थिति को संभालने का प्रयत्न किया, लेकिन कोई हल न निकला।

तभी मंत्री अनन्तमिश्र को यह समाचार मिला कि सामन्त राजा शुक्रपाल विक्रमपुर पर चढ़ाई करने की तैयारी कर रहा है। अनन्तमिश्र ने सोचा कि अब तक जो होना था, होगया।

लेकिन अब, देर करने से ख़तरा हो सकता है। उसने राजा से निवेदन किया, "महाराज, आपने राज्य के अन्दर की समस्याओं को 'रद्द' सूत्र द्वारा हल कर दिया है। क्यों न हम एक बार देश का भ्रमण करें और इस बात का पता लगायें कि आपके राज्य-शासन में जनता कितनी सुख-शांति का अनुभव कर रही है ?"

राजा ने मंत्री का सुझाव स्वीकार कर लिया। दोनों ने साधारण वेश धारण किया और सूर्यास्त के पहले ही राजधानी के समीप के एक गाँव में पहुँचे। वहाँ पीपल-वृक्ष के नीचे की चौपाल में गाँव के छोटे-बड़े अनेक लोग एकत्रित हुए थे। गाँव के मुखिया के साथ चार और बड़े बुजुर्ग व्यक्ति भी थोड़े ऊँचे आसन पर बैठे हुए थे।

गाँव के मुखिया ने ग्रामवासियों को उन चारों बुजुर्गों का परिचय देते हुए कहा, "ये चारों वरिष्ठ पुरुष हमारे पड़ोसी गाँवों के मुखिया हैं। ज़रा-ज़रा सी बात पर विभागों को बंद कर देना, कानूनों को रद्द करने, यह कल्पना करके राजा जयवर्मा ने गुरुकुलों को ही बंद कर दिया है। हमारे बच्चे गुरुकुल की शिक्षा के अभाव में मूर्ख और अज्ञानी बनकर हमारे गले के पत्थर बने हुए हैं।"

बाहर से आये एक वयोवृद्ध मुखिया ने कहा, "रक्षक-दल विभाग को रद्द करना भी ऐसी ही एक मूर्खता है। पहले तो छोटी-मोटी चोरियाँ ही होती थीं, अब रक्षकों के अभाव में डाकू-लुटेरे दिन-दहाड़े गाँवों को लूट रहे हैं।"
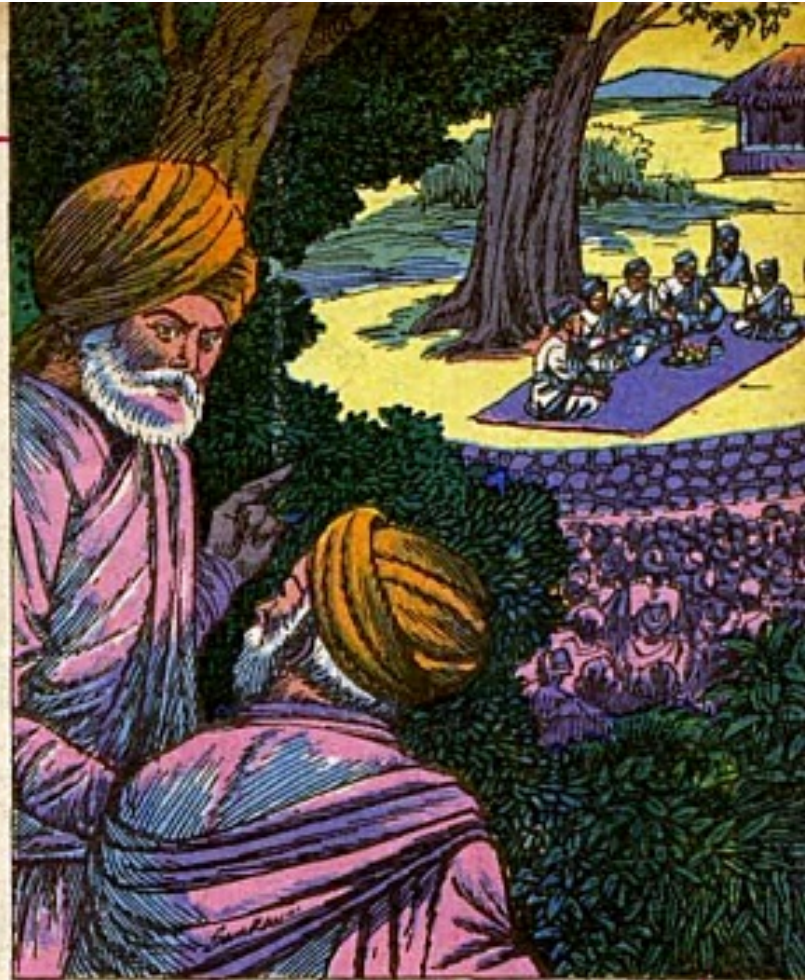
तीसरे मुखिया ने उठ कर कहा, "मेरे देशवासियो, आप सावधान होकर सुनें। इस समय देश की रक्षा यानी हम सब की रक्षा की समस्या सामने है। राजा ने सैनिक विभाग का ही उन्मूलन कर दिया है। उसका फल यह हुआ कि विक्रमपुर राज्य के अधीन रहकर राजा को वार्षिक शुल्क चुकानेवाला एक अधीनस्थ सामंत राजा हम पर चढ़ाई करने जा रहा है।"

एक और मुखिया ने कहा, "कवियों-कलाकारों, विद्वानों को राजाश्रय से निकाल कर हमारे राजा ने देश की मान्य परम्परा को ही नष्ट कर दिया है। अब नागरिकों को कौन जागृत करेगा ?"

चौथे मुखिया ने कहा, "हमारे देश के

कवि-कलाकार अब पड़ोसी राज्यों में प्रवासी होकर रह रहे हैं। यह हमारे लिए अत्यन्त अपमान की बात है। हमें, हमारे देश और राज्य, हमारे समय को इतिहास में स्थायी स्थान देनेवाली चीज़ें होती हैं—कवियों-कलाकारों की कृतियाँ, उनके विचार, उनके स्वप्न। अब क्या रहा ?"

अंत में गाँव के मुखिया ने सबको सम्बोधित करते हुए कहा, "मैं जो कुछ कहने जा रहा हूँ, उसे साधने के लिए तुम्हें अनेक संघर्षों, कष्टों और बलिदानों से गुज़रना पड़ेगा। मेरा प्रस्ताव यह है कि हम सब मिलकर राजा जयवर्मा पैतृक रूप में प्राप्त 'राजपद' का ही उन्मूलन कर डालते हैं। इसके बाद प्रजा अर्थात् हम स्वयं अपना राजा चुनेंगे और ऐसे व्यक्ति को 'राजपद' देंगे, जो हमारे सुख-दुख का ख्याल रखकर नीति और कुशलता से सामर्थ्यपूर्वक हमारे देश का शासन कर सके।"

सारे एकत्रित जन-समुदाय ने ज़ोर-ज़ोर से तालियां बजाकर अपनी सहमति प्रकट की। यह सब देखकर जयवर्मा का सिर चकरा गया।

राजा ने तुरन्त मंत्रणा-गृह में प्रवेश किया और मंत्री अनन्तमिश्र तथा मंत्रियों से परामर्श करके उन्मूलित विभागों का फिर से गठन किया। कानून-व्यवस्था पूर्ववत् ज़ारी कर दी गयी।

राजा जयवर्मा ने प्रजा से सहयोग की माँग की और बहुत जल्दी ही एक बड़ी सेना का संगठन किया और सामन्त शुक्रपाल की सारी योजना पर पानी फेर दिया। इसके बाद राजा ने प्रवासी बने कवियों-कलाकारों को सादर निमंत्रित कर उन्हें राजाश्रय दिया और नगर तथा राजोद्यान में अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के प्रतिदिन प्रदर्शन का प्रबन्ध किया।

राजा जयवर्मा के जागरूक होने से और सुव्यवस्था के स्थापित होने से प्रजाओं में सर्वत्र खुशहाली छा गयी। उन्होंने पैतृक 'राजपद' के उन्मूलन का विचार त्याग दिया और वे राजा के प्रति प्रेम-आदर की भावना रखकर देश की उन्नति में उसे हर प्रकार का सहयोग देने लगे।

ताँबे की अंगूठी

श्रीहरि के माता पिता बचपन में ही मर गये थे। उसके नाना धर्मवीर ने ही उसको पाल पोसकर बड़ा किया था। धर्मवीर के पास संपत्ति के नाम पर एक मकान के सिवा और कुछ नहीं था। वह मेहनत मज़दूरी करता और अपने नाती को लाड़ प्यार से रखता। श्रीहरि अब बड़ा हो चला था, लेकिन धर्मवीर उसे कभी अपने साथ काम पर नहीं ले गया और न उसे कोई हुनर ही सिखाने का प्रयत्न किया। तभी एक दिन धर्मवीर दो दिन की बीमारी में चल बसा। श्रीहरि एक छोटे बच्चे की तरह दहाड़ मार कर रोने लगा।

नाना के पास जो थोड़ी सी जमा पूंजी थी, उसके सहारे श्रीहरि ने तीन माह गुज़ार दिये। इसके बाद वह काम की तलाश में घूमने लगा। वह जिसके पास भी जाता, वह हँस पड़ता और कहता, "तुम आज तक अपने नाना की कमाई पर पलते रहे, पर तुमने कोई काम नहीं सीखा। हम तुम्हें क्या काम दें ? जाओ, यहाँ से !"

श्री हरि उस गाँव से और गांव के लोगों से तंग आ गया। उसने अपना मकान बेचा और उस धन को लेकर दूसरे गाँव वीरमपुर में पहुँचा। उसने एक छोटा सा मकान किराये पर लिया और नौकरी की खोज करने लगा।

मगर वहाँ भी क़िस्मत ने उसका साथ नहीं दिया। कोई भी एक अजनबी को नौकरी देने को तैयार नहीं था। धीरे-धीरे जो भी पैसा पास में था, ख़त्म हो गया, लेकिन कोई नौकरी नहीं मिली।

एक रात श्रीहरि किवाड़ खोल कर पिछवाड़े की तरफ़ गया। पूर्णिमा की रात थी। उसने देखा, मकान-मालिक की बेटी प्रमीला भागी हुई कुएं की तरफ़ जा रही है श्रीहरि ने दौड़कर उसका हाथ पकड़ लिया और ज़रा कड़कती आवाज़ में पूछा, "यह तुम क्या करने जा रही

शंभुनाथ जोशी

हो ? कहीं पागल तो नहीं हो गयी हो ?"

प्रमीला सिसक-सिसक कर रोने लगी। उसने अपनी दुखभरी कहानी श्रीहरि को सुनायी। प्रमीला की मां मर चुकी थी और यह उसकी सौतेली मां है। इसके भी अपनी दो बेटियां हैं, जो विवाह के योग्य हो चुकी हैं। वह प्रमीला की शादी किसी अमीर बूढ़े के साथ करने जा रही है, ताकि उसकी मदद से वह अपनी बेटियों का अच्छे घर में विवाह कर सके।

अंत में अपने आंसू पोंछकरर प्रमीला ने कहा, "उस बूढ़े के साथ शादी करने की अपेक्षा तो कुएं में कूद कर जान देना कहीं अच्छा है—यही सोचकर आज की रात मैं निकली थी, पर तुमने रोक लिया !"

"मुसीबतों से छुटकारा पाने के लिए बड़े धैर्य की ज़रूरत होती है। जल्दीबाजी में कभी कोई गलत निर्णय नहीं करना चाहिए।" श्रीहरि ने प्रमीला को समझाया।

प्रमीला ने कहा, "मैं भले ही धैर्य धर लूँ, पर फ़ायदा क्या होगा ? दो हफ्ते के अंदर उस बूढ़े के साथ मेरी शादी कर दी जायेगी।"

श्रीहरि ने प्रमीला को उसके घर भेज दिया। दूसरे दिन प्रमीला के माता-पिता के पास गया और नम्र शब्दों में बोला, "मैं आपकी पुत्री प्रमीला के साथ विवाह करना चाहता हूँ।"

प्रमीला की सौतेली मां गुस्से में भरकर बोली, "देखो, तुम्हारे पास न कोई नौकरी है, न कोई धंधा ! ज़मीन जायदाद का तो नामोनिशान भी नहीं है। ऐसी हालत में तुम्हें हमारी बेटी से शादी की बात सोचते हुए शर्म नहीं आती ? तुम अभी जाओ और हमारा किराया लाकर दो, वरना इसी वक्त हमारे मकान का हिस्सा ख़ाली कर दो !"

श्रीहरि सिर झुकाकर वहाँ से चला गया। उसने दिन भर नौकरी की खोज की, पर उसकी कोशिश बेकार गयी। उसे घर लौटने की इच्छा भी नहीं हुई। शाम हो चुकी थी। वह गांव से कुछ दूर एक जंगल में जाकर एक पेड़ के नीचे लेट गया। थोड़ी ही देर में उसे नींद आ गयी।

आधी रात के समय भारी आहट सुनकर उसकी आंखें खुल गयीं। वह देखता क्या है, उसके सामने एक पिशाचिनी खड़ी हुई है।

उस बूढ़ी पिशाचिनी ने श्रीहरि से कहा, "तुम जहाँ लेटे हुए हो, वह मेरा स्थान है। इस जगह को छोड़कर मुझे और कहीं नींद नहीं आती। तुम इस जगह पर से उठ जाओ!" एक क्षण को रुक कर वह पिशाचिनी फिर बोली, "आधी रात के समय यहां मुझ जैसे भयानक भूत-प्रेत-पिशाचों का संचार होता है। तुमने इस जगह आने की हिम्मत कैसे की? मैं सचमुच ही तुम्हारे साहस को दाद देती हूँ।"

श्रीहरि हर तरह से जीवन से तंग आ चुका था। इसलिए उसे उस पिशाचिनी से कोई डर नहीं लगा। उसने अपने सामान्य स्वर में ही कहा, "मैं तुमसे कहीं अधिक भयंकर मनुष्यों के बीच रह चुका हूँ। अब और उनके बीच नहीं जी सका, तो यहां पर आया हूँ। तुम अपनी जगह सो जाओ, मैं किसी और पेड़ के नीचे चला जाऊंगा!" श्रीहरि उठ खड़ा हुआ।

पिशाचिनी ने श्रीहरि से रुक जाने के लिए कहा और पूछा, "तुम मनुष्यों के बारे में ऐसी बुरी धारणा क्यों रखते हो? बताओ, तुम पर ऐसी कौन-सी विपदा आ गयी है?"

श्रीहरि ने पिशाचिनी को अपना सारा किस्सा सुनाया और बोला, "मैं सब लोगों के पास जाकर गिड़गिड़ाया, पर किसी ने मुझे नौकरी नहीं दी। ईमानदार व्यक्ति पर कोई विश्वास नहीं करता।"

सब बातें सुनकर पिशाचिनी खिलखिला कर हँस पड़ी, बोली, "बेटा, मेरे जमाने में भी दुनिया ऐसी ही थी। तुम चिन्ता मत करो। मैं तुम्हारी तक़लीफ़ों को दूर करूँगी।" पिशाचिनी पेड़ की जड़ के पास गयी और वहाँ की एक खोखले में से जंग लगी एक तांबे की अंगूठी ले आयी, फिर बोली, "इसे तुम अपनी उंगली में पहन लो। तुम जिससे भी जो कुछ मांगोगे, इस अंगूठी के प्रभाव से वे लोग तुम्हें वह चीज़ चुपचाप दे देंगे। पर एक बात याद रखना, इस अंगूठी की महिमा केवल तीन बार ही काम देगी।"

पिशाचिनी ने वह अंगूठी श्रीहरि के हाथ में दे दी। सुबह होनेवाली थी, इसलिए वह गायब हो गयी।

श्रीहरि ने अंगूठी पहन ली। सबसे पहले वह एक बड़े व्यापारी के यहां पहुँचा और उससे

विनम्र शब्दों में बोला, "मैं आपके यहां नौकरी करना चाहता हूँ, मुझे कोई काम देने की कृपा करें।" इससे पहले उस व्यापारी ने श्रीहरि को नौकरी देने से साफ़ इनकार कर दिया था। लेकिन अब वही व्यक्ति उस अंगूठी के प्रभाव के कारण बोला, "मुझे तुम जैसे एक आदमी की तलाश थी, तुम आज से ही काम पर आ जाओ !"

श्रीहरि ने नौकरी पर अपना पहला दिन प्रारंभ किया। उसी दिन शाम को वह प्रमीला की सौतेली मां के पास गया और बोला, "माताजी, मुझे नौकरी मिल गयी है। अब आप प्रमीला के साथ मेरी शादी कर दीजिए !"

"बेटा, मैं भी ऐसा ही सोच रही थी। मैं इसी हफ्ते में तुम दोनों की शादी कर देती हूँ।" प्रमीला की सौतेली मां ने कहा।

एक हफ्ते बाद श्रीहरि और प्रमीला की शादी होगयी। शादी के दस दिन बाद प्रमीला ने श्रीहरि से पूछा, "तुमने एक ही दिन में मेरी मां का मन कैसे बदल दिया ? मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। साथ ही, जिस व्यापारी ने तुम्हें पहले नौकरी देने से इनकार कर दिया था, उसी ने तुम्हें अपने यहाँ नौकरी कैसे दे दी ?"

श्रीहरि ने प्रमीला को सारा वृत्तान्त सुनाकर कहा, "पिशाचिनी ने मुझे जो अंगूठी दी थी, यह सब उसी के प्रभाव के कारण है।"

प्रमीला ने तांबे की अंगूठी की बात सुनी तो उसे चक्कर आगया और वह चीखकर नीचे गिरने को हुई। श्रीहरि ने उसे थाम लिया और शांत करके बोला, "यह तुम्हें क्या हो गया ?"

"आज सवेरे मैं पेटी को करीने से लगा रही थी। तभी कपड़े रखते वक्त मुझे ज़ंग लगी तांबे की अंगूठी दीख पड़ी। उसे अशुभ मैली वस्तु समझकर मैंने पिछवाड़े के कूड़े में फेंक दिया।" प्रमीला ने जवाब दिया।

"अच्छा, ऐसा है !" श्रीहरि ने निश्चिंतता की साँस ली।

श्रीहरि को ज़रा भी चिंतित न देख प्रमीला क्रोधित होकर बोली, "ऐसी महिमाशाली अंगूठी पाकर भी तुमने ये दो मामूली सी चीज़ें माँगी ! तुम्हें मेरे साथ-साथ मेरी सौतेली मां से यह मकान भी दहेज के रूप में माँगना चाहिए

था। व्यापारी से सिर्फ़ नौकरी न माँगकर व्यापार में हिस्सा माँगना चाहिए था। ख़ैर, मैं अभी उस अंगूठी को ढूंढ कर लाती हूँ।" यह कह कर वह पिछवाड़े की तरफ़ जाने लगी।

श्रीहरि उसे रोककर बोला, "मैंने तुम्हें पहले ही समझाया था न! जिसके भाग्य में जितना लिखा है, वही उसे प्राप्त होगा, भले ही उसे कई वर प्राप्त हों। हमारे भाग्य में इससे अधिक कुछ नहीं था, इसीलिए तुमने वह अंगूठी फेंक दी।"

"उस अंगूठी में अभी एक और इच्छा पूरी करने का प्रभाव बाकी है। मैं अभी उसे ढूंढ़ कर लाती हूँ। इस बार तुम उस अंगूठी को पहन कर ज़मींदार के पास जाना और उससे आधी ज़मीन मांग लेना।" यह कह कर प्रमीला ने दीपक जलाया और पिछवाड़े में जाकर कूड़े में से अंगूठी खोज कर ले आयी।

इसके बाद प्रमीला ने वह अंगूठी अपनी उंगली में डाल ली और श्रीहरि से बोली, "जमींदार से आधी ज़मीन मांगने की शायद तुम्हारी इच्छा नहीं है। मैं ही खुद उसके पास जाऊँगी। बोलो, तुम्हें स्वीकार है?"

"स्वीकार है!" कहकर श्रीहरि बड़ी ज़ोर से हँस पड़ा और बोला, "तुम इस अंगूठी को फिर से कूड़े में फेंक दो। तुमने अंगूठी पहन कर मुझसे अपनी इच्छा प्रकट की, मैंने मान ली। इस तीसरी बात के पूरी होते ही अंगूठी का प्रभाव समाप्त हो गया। समझ गयीं!"

अंगूठी के प्रभाव के समाप्त होने की बात जानकर प्रमीला दुखी हो गयी। श्रीहरि ने उसे सांत्वना दी और बोला, "संतुष्टि का न होना ही दुख का कारण है। तुमने बीस दिन पहले मुझसे कहा था कि मेरे साथ तुम्हारी शादी हो जाये तो यह बहुत बड़ी बात होगी और तुम्हें सब तकलीफ़ों से छुटकारा मिल जायेगा। अब तुम ही अपनी आँखों में आँसू भर रही हो।"

प्रमीला का समाधान हो गया। उसने अपने पति की बातों को हृदय में धार लिया और अपने आँसू पोंछ कर बोली, "मुझे अपने अज्ञान और लालच पर खुद लज्जा आ रही है।"

नारियल-चोर

धामपुर गांव में एक काश्तकार रहता था, नाम था जुगल किशोर। उसने मगनलाल नाम के एक युवक को चार रुपये माह की तनख्वाह पर अपना माली नियुक्त किया और एक बड़ा बगीचा लगवाया। मगनलाल कुशल माली था। उसने अपने मालिक के आदेश से आम, केले और नारियल के पौधे लगा दिये और तरह-तरह की साग-सब्जी भी बो दी।

धीरे-धीरे बगीचा बढ़ता गया। मगनलाल ने जुगल किशोर से विनती की, "मालिक, मेरी भी कुछ तनख्वाह बढ़ा दी जाये !"

"अरे, इतनी जल्दी कैसे बढ़ा दूँ ? जल्दबाजी करना अच्छा नहीं होता। नारियल के पेड़ में फल लगने दो, फिर देखूँगा !" जुगल किशोर ने कहा।

थोड़े दिनों बाद नारियल के पेड़ों में घौद लगे। मगनलाल ने आग्रह किया कि तनख्वाह में कम से कम दो रुपये उसे ज़्यादा मिलें।

जुगलकिशोर स्वार्थी था, बिगड़ कर बोला, "अबे जा ! अब तेरे लिए बगीचे में करने को काम ही क्या रह गया है ? दो रुपये तो छोड़, मैं तेरी तनख्वाह एक कौड़ी भी नहीं बढ़ाऊँगा। काम करना हो कर, वरना चलता बन !"

मगनलाल मुसीबत में फँस गया। बगीचे के लिए जो कुछ करना था, सारा काम वह पहले ही कर चुका था। मालिक के व्यवहार से उसे बड़ी निराशा हुई। उसने सोचा, ईमानदारी से तो मालिक देगा नहीं, अब वह चोरी से अपना मेहनताना पूरा करेगा।

वह हर रात बगीचे में से दो नारियल चुराने लगा। तीन दिन बाद जुगल किशोर को पता चल गया कि बगीचे से नारियल चोरी जा रहे हैं। पर उसे चोर का पता न लगा। उसने मगनलाल से भी पूछताछ की कि कहीं वह तो चोरी नहीं कर रहा है। उसने साफ़ इनकार कर दिया।जुगल किशोर कुछ देर सोचता रहा फिर

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

बोला, "अब तुम एक काम करो। रात के समय बगीचे में पहरा देकर चोर को पकड़ लो!"

"मालिक, आप मेरी दो रुपया तनख्वाह बढ़ा दो। मैं रात में पहरा भी दूँगा और दिन में बागवानी भी करूँगा।" मगनलाल ने फिर विनती की।

"यह सब किसी और को सिखाना। मैं खुद बगीचे का पहरा दूंगा।" यह कह कर जुगल किशोर तुरन्त देवी के मंदिर में गया और मनौती की, "माता, नारियल-चोर मेरी नज़र में आ जायेगा, तो मैं तुम्हें एक बकरे की बलि चढ़ाऊँगा!"

उसने देवी को प्रणिपात किया।

तभी मगनलाल भी देवी के मंदिर में गया था। उसने आड़ में रहकर अपने मालिक की बातें सुन लीं।

जुगल किशोर के चले जाने पर मगनलाल ने देवी की मनौती की, "माता, मुझे अपने मालिक के हाथों में पड़ने से बचाओगी तो मैं तुम्हें एक मुर्गे की बलि चढ़ाऊँगा! बस, मेरी हैसियत इतनी ही है।"

आधी रात हुई। मगनलाल बगीचे में आया और कुएँ की बगलवाले नारियल के पेड़ पर चढ़ गया। उसने एक नारियल तोड़कर दूर फेंक दिया।

उसने ऐसा इसलिए किया था कि अगर मालिक बगीचे में चोर के लिए ताक लगाये बैठा होगा तो वह उस जगह चोर को ढूंढ़ने का

प्रयत्न करेगा, जहाँ नारियल गिरा है।

लेकिन जुगल किशोर चालाक आदमी था। उसने पहले ही किसी को कुएं की बगलवाले नारियल के पेड़ पर चढ़ते देख लिया था। वह मगनलाल को पहचान नहीं सका था। जुगलकिशोर ने लाठी और रस्सी ली और उस पेड़ के नीचे आ गया।

ज़ोर से चिल्लाकर बोला, "अरे, चोर के बच्चे, नीचे आ! मुझे धोखा देना चाहता है! मैं तुझे पेड़ से बाँध कर तेरी चमड़ी उधेड़ दूँगा।"

मगनलाल को इस तरह पकड़े जाने की उम्मीद नहीं थी। वह डर के कारण पेड़ पर ही बैठा रह गया।

उसी वक्त धम्म की आवाज़ हुई और

जुगलकिशोर ने देखा कि कोई पेड़ पर से कुएं में कूद पड़ा है। उसने लाठी और रस्सी को कुएँ की जगत पर रखा और चिल्लाकर बोला, "अरे, तू कुएँ में कूदकर क्या मेरे हाथों से बच जायेगा ? मैं आस पास के चौदह गाँवों का नामी कुशल तैराक हूँ।" और वह कुएं में कूद पड़ा। जुगल किशोर पानी में हाथ-पैर मारकर चोर की खोज करने लगा।

किसी का सिर उसके हाथ का स्पर्श भी कर गया, पर वह उसकी पकड़ में न आया। थोड़ी देर तक जुगल किशोर को तंग करने के बाद मगनलाल ने अपने मालिक को पैर से एक झटका दिया और चट से कुएं से बाहर निकल आया। चोर की चालाकी पर जुगल किशोर को बड़ा आश्चर्य और दुख भी हुआ।

दूसरे दिन जुगल किशोर ग्राम देवी के मंदिर में गया और देवी से कहा, "माता, तुमने मुझे धोखा दिया। चोर मेरी नज़र में आकर भी बचकर भाग निकला। मैं तुम्हें बकरे की बलि नहीं चढ़ाऊँगा।"

"तुमने चोर को दिखाने की प्रार्थना की, मैंने तुम्हें चोर को दिखाया। तुम अपने मेहनती माली की दो रुपया तनख्वाह न बढ़ा सके-तुम जैसा कंजूस आदमी मुझे बकरे की बलि क्या देगा ? तुम्हारी बात का क्या भरोसा ? मगनलाल की तनख्वाह अगर तुम उसी वक्त बढ़ा देते तो तुम इन सारी मुसीबतों से बच जाते। नहीं ?" देवी ने पुजारी के माध्यम से जुगल किशोर से कहा।

देवी की बातें सुनने के बाद जुगल किशोर को अपनी भूल मालूम हो गई। वह अपनी करनी पर पछताने लगा। "मैं कैसा मूर्ख हूँ !" माली की तनख्वाह अगर दो रुपये बढ़ा देता तो वह इमानदारी से काम करता। मेरी आमदनी बढ़ जाती। देवी को बकरी की बलि चढ़ाता तो मेरे कितने रुपये खर्च होता। मैं इधर माली और उधर देवी का याने दोनों का विश्वास खो बैठा। इसी बात पर विचार करते करते उस के अन्दर ज्ञान का उदय हुआ। उसने उसी दिन मगनलाल की तनख्वाह बढ़ा दी। इसके बाद उसके बगीचे में फिर कभी नारियलों की चोरी नहीं हुई।

शिवपुराण

तारकासुर क्रोधावेश में अपने महल को लौट आया। उसने शिव पंचाक्षरी मंत्र का जाप किया। वह जब ध्यान में निमग्न था तो उस समय उसे यह आकाशवाणी सुनाई दी—"तारकासुर, तुम चिन्ता मत करो ! मैं तुम्हें मोक्ष प्रदान करूँगा।" तारकासुर ने पूजा समाप्त कर लिंग को कंठ में धारण कर लिया। दूसरे दिन वह पुनः युद्धभूमि में पहुँचा।

कुमार स्वामी और तारकासुर में भयानक युद्ध हुआ। कुमार स्वामी ने तारकासुर पर अनेक शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किया, पर तारक पर उनका कोई प्रभाव नहीं हुआ। नारदमुनि ने कुमार स्वामी को बताया कि जब तक तारकासुर के कंठ में शिवलिंग विद्यमान है, तब तक कोई भी अस्त्र उसे हानि नहीं पहुँचा सकता।

युद्ध करते हुए कुमार स्वामी को नारद की बातों का स्मरण हुआ तो उन्होंने तारक के कंठ में स्थित शिवलिंग पर आग्नेय अस्त्र का प्रयोग किया। वह लिंग पाँच टुकड़े होकर ज़मीन पर गिर पड़ा। सूर्य, विश्वकर्मा आदि ने तत्क्षण उन पाँचों टुकड़ों को चुन लिया और उन्हें पाँच स्थानों पर प्रतिष्ठित किया। वे ही टुकड़े पंच भीम लिंगेश्वर नाम से विख्यात हैं।

तारक के कंठ में शोभित शिवलिंग के टूटने के बाद कुमार स्वामी ने तारक पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करके उसका संहार किया। तारकासुर की सेना नष्ट-भ्रष्ट हो गयी। देवगण पुष्पवर्षा करने लगे।

तारक-वध एवं अनेक अन्य असुरों का वध करने के बाद कुमार स्वामी कुछ काल तक स्वर्ग

८. वल्ली का विवाह

में रहे, फिर अपने माता-पिता पार्वती-परमेश्वर की सेवा करने का संकल्प लेकर कैलाश में चले गये ।

इसी सेवा-अवधि में एक दिन कुमार अपने मित्रों के साथ वन-विहार कर रहे थे । तभी महर्षि नारद उनके समीप आये । कुमार स्वामी ने नारद का अतिथि-सत्कार किया और पूछा, "मुनिवर, तीनों लोकों का क्या समाचार है ?"

"कुमार, आपकी कृपा से समस्त लोकवासी कुशल-मंगल से हैं, सुखी हैं । आपने असुरों का संहार किया, इसलिए यज्ञ-याग आदि संपन्न हो रहे हैं । पर मैं आपको एक समाचार देने आया हूँ । यहाँ से थोड़ी ही दूरी पर भील पुर नाम का एक गाँव है । वहाँ भीलों का एक राजा है, जिसका नाम पुलिन्द है । वह एक ईश्वर-भक्त मनुष्य है । बहुत समय तक उसके कोई संतान नहीं हुई । उसके मन में संतान की कामना थी । एक दिन वह भील राजा, पुलिन्द वन में घूम रहा था तो उसे एक बालिका मिली । उसने उस बालिका को लाकर अपनी पत्नी के हाथों में सौंप दिया । उन दोनों ने बालिका का नामकरण 'वल्ली' किया अब वल्ली बड़ी हो गयी है । उसके सौन्दर्य का वर्णन करना मेरे वश की बात नहीं है । 'वरलक्ष्मी' जैसी प्रतीत होती है । ब्रह्मदेव के समक्ष एक बार वल्ली का प्रसंग आया तो उन्होंने मुझे बताया था कि वह आपकी पत्नी बनेगी । अब आप उसके साथ विवाह करके सबको आनन्द प्रदान कीजिए !"

नारद ने कुमार स्वामी से विदा ली और भील राजा पुलिन्द के पास पहुँचे । पुलिन्द ने नारद का स्वागत किया और विनम्र शब्दों में पूछा, "मुनिवर, कृपा कर बताइये, हमारी पुत्री वल्ली के रूप-गुणों के अनुरूप पति कहाँ मिल सकता है ?"

"सुनो, पुलिन्द, इस कन्या के योग्य वर शिव-पुत्र कुमार स्वामी ही हैं । वल्ली सब प्रकार से उनके योग्य है और उनकी पत्नी बनने लायक़ है । कुमार स्वामी निकट भविष्य में ही वन-विहार के लिए आयेंगे और वल्ली को देखकर इस पर मुग्ध हो जायेंगे । अवश्य ही उनसे वल्ली का विवाह होगा । परमेश्वर शिव के आप सम्बन्धी होंगे । इससे बढ़कर महान भाग्य
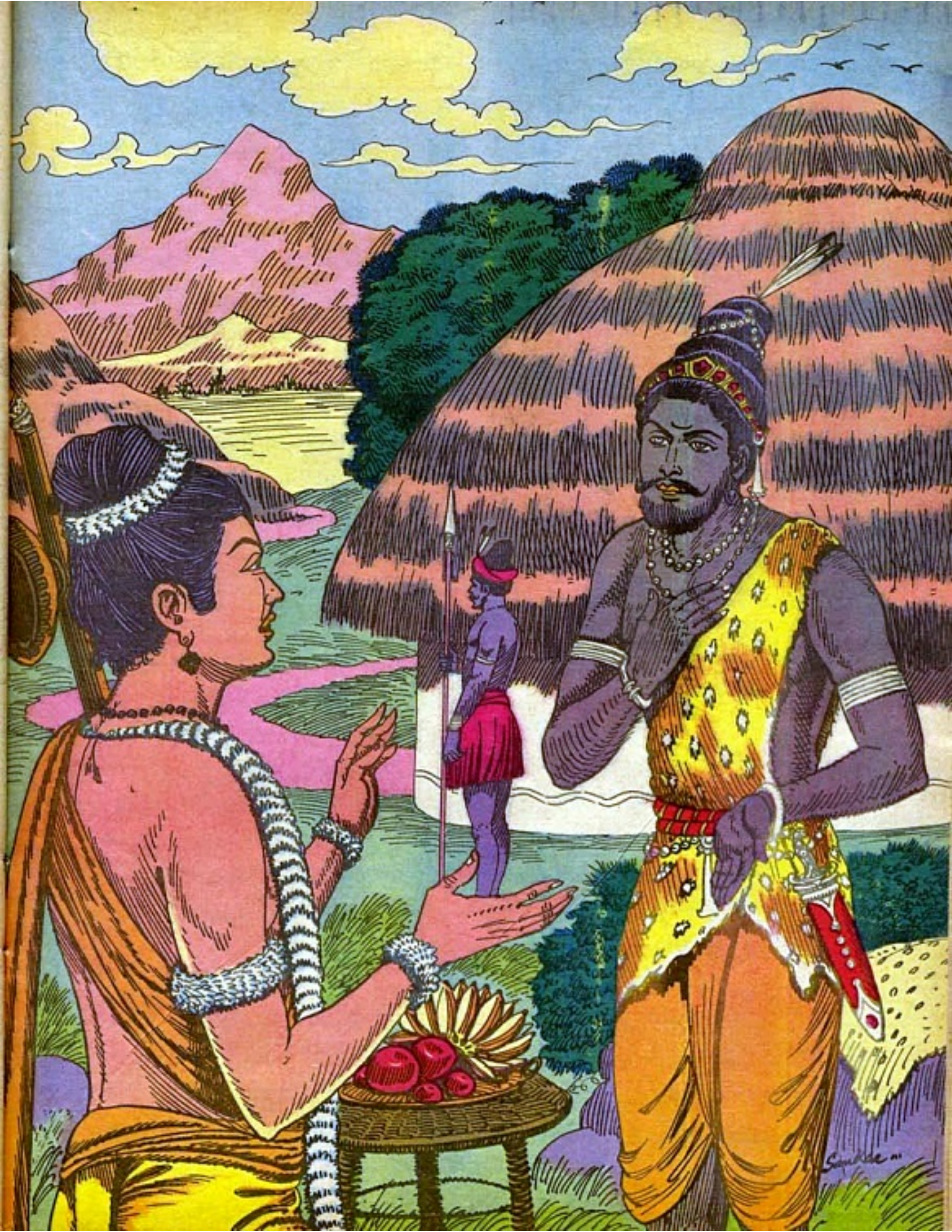
और क्या हो सकता है ?" पुलिन्द को यह सुखद समाचार देकर नारद चले गये ।

जब से नारद मुनि ने कुमार स्वामी से वल्ली के सौन्दर्य के बारे में कहा, तब से कुमार स्वामी के मन में कुतूहल जगा और वे उसके साथ विवाह करने के बारे में विचार करने लगे । उनके मन में यह शंका भी हुई कि उनके माता-पिता भील कन्या के साथ विवाह करने की स्वीकृति देंगे या नहीं ? कोई भी निर्णय लेने के पूर्व उन्होंने वल्ली को एक बार देख लेना आवश्यक समझा । उन्होंने अपने मित्रों-परिचरों को साथ लिया और भील पुर के निकटवर्ती वन प्रदेशों में विहार करने के लिए निकल पड़े ।

नारद की बातों से जिस प्रकार कुमार स्वामी विकल हो गये थे, उसी प्रकार वल्ली भी व्याकुल रहने लगी । वह बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा करने लगी कि कुमार स्वामी कब उस ओर पधारेंगे ? वल्ली के मन में अपने निम्न कुल का संकोच भी था । क्या पता, कुमार उसके साथ विवाह करेंगे या नहीं । उसके माता-पिता ने उसे पाला-पोसा ज़रूर है, लेकिन वे उसके जन्मदाता नहीं हैं— यह सोचकर वह अपने मन को सांत्वना देने लगी । यदि कुमार स्वामी ने उसके साथ विवाह नहीं किया तो ? उसने निश्चय किया कि वह अपनी देह त्याग देगी ।

इस प्रकार विचार करके वल्ली एक दिन अपने माता-पिता को सूचित किये बिना अपनी सखियों को साथ लेकर वन-विहार के लिए चल पड़ी । वह अपनी सखियों के साथ एक आम्र वृक्ष के नीचे बैठी हुई थी, उसी समय कुमार स्वामी भी अपने अनुचरों के साथ आकर एक अन्य वृक्ष के नीचे बैठ गये ।

वल्ली की एक सखी शुभा ने कुमार स्वामी के निकट आकर पूछा, "महानुभाव, आप कौन हैं और कहाँ से पधारे हैं ? जिस पुष्पवाटिका में आप बैठे हुए हैं, वह पुलिन्द राजा की पुत्री वल्ली का विहार-स्थल है । इस प्रदेश में पुरुषों का प्रवेश निषिद्ध है ।"

ये बातें सुनकर कुमार स्वामी के भीतर नय. उत्साह उमड़ पड़ा । उन्होंने वल्ली की सखी से कहा, "भद्रे, मेरा नाम कुमार स्वामी है । मैं शिव और पार्वती का पुत्र हूँ । हमारा निवास कैलास

पर है। तुम्हारी सखी वल्ली के विषय में कुछ कहने योग्य हो तो कहो !"

"यह पुलिन्द देश है। भीलों के राजा पुलिन्द यहाँ राज्य करते हैं। भीलपुर उनकी राजधानी है और यह वन-प्रदेश उन्हीं के राज्य के अन्तर्गत है। हमारे महाराजा के कोई सन्तान् नहीं है। कई वर्ष पूर्व इसी वन में उन्हें एक कन्या प्राप्त हुई थी। राज दम्पती ने उसी कन्या को पाल पोसकर बड़ा किया। वही हमारी सखी वल्ली हैं।" शुभा ने कहा।

"तुम्हारी सखी का विवाह हो गया है?" कुमार स्वामी ने जिज्ञासा प्रकट की।

"सम्बन्ध तो हो चुका है, अब केवल विवाह होना शेष है।" शुभा ने उत्तर दिया।

कुमार स्वामी का हृदय विकल हो उठा। उन्होंने आतुर होकर पूछा, "किसके साथ सम्बन्ध हुआ है? वर कौन है?"

"कुछ दिन पहले ही हमारे राजभवन में महामुनि नारद का आगमन हुआ था। उन्होंने महाराज से कहा कि कुमारी वल्ली का विवाह शिव पुत्र कुमार स्वामी के साथ होगा। तब से हमारी सखी वल्ली ने कुमार स्वामी को ही पति रूप में हृदय में धारण कर लिया है। वे एक-एक क्षण एक युग की तरह बिता रही हैं। उनकी व्याकुलता हमसे देखी नहीं गयी, इसीलिए हम सब सखियाँ उन्हें वन-विहार के लिए ले आयी हैं। आप ही शिवपुत्र कुमार स्वामी हैं। भाग्य हमारे अनुकूल है। आप क्षण भर यहीं ठहरिये, मैं अभी कुमारी वल्ली को

लेकर आती हूँ।" यह कह कर शुभा वहाँ से चली गयी और वल्ली का हाथ पकड़ कर उसे कुमार के सामने खींच लायी।

कुमार स्वामी ने वल्ली का पल्लव से भी कोमल हाथ पकड़ कर कहा, "वल्ली, तुम मेरे साथ चलो। हम विवाह करेंगे।"

"कुमार, यदि आप मेरे साथ विवाह करना चाहते हैं तो आप मेरे माता-पिता की स्वीकृति लीजिए। इससे लोक-निन्दा नहीं होगी। आप कुछ देर यहीं विश्राम करें। मैं अपने माता-पिता की अनुमति लेकर आती हूँ।" वल्ली ने कुमारस्वामी के हाथ से अपना हाथ छुड़ा लिया और अपनी सखियों के साथ घर लौट आयी।

वल्ली की सखियों से सारा समाचार

जानकर पुलिन्द सपरिवार कुमार के स्वागत के लिए आये । उन्होंने कहा कि अगले दिन बड़े सवेरे विवाह का शुभ लग्न है उन्होने कुमार स्वामी तथा उनके परिवार के निवास की उचित व्यवस्था की और विवाह की तैयारियों के लिए राजभवन में प्रवेश किया ।

इस बीच शिव-पार्वती को भी कैलास में सूचित कर दिया गया । उनकी अगवानी के लिए पुलिन्द देश से अनेक सम्मानित व्यक्ति आये । वल्ली के साथ कुमार स्वामी का विवाह संपन्न हुआ और शिव-पार्वती वर-वधू के साथ अपने निवास स्थान कैलास को लौट गये ।

...दिन बीतते गये । इसी बीच शोणितपुर में गजासुर नाम का एक असुर शक्ति शाली होता गया । उसने भी ब्रह्मा को लक्ष्य कर घोर तपस्या की और अनेक वर प्राप्त किये । उसने भी तीनों लोकों पर अधिकार कर लिया । उसके राज्य में सब सुखी थे । किसी को कोई कठिनाई न थी ।

एक दिन नारदमुनि गजासुर की राजधानी शोणितपुर पहुँचे । गजासुर ने उनका अतिथि-सत्कार किया । एक योग्य आसन पर विराजमान हो नारद बोले, "गजासुर, तुम महान ईश्वर-भक्त हो । तुम शिव से ऐसी प्रार्थना करो कि वे सदा तुम्हारे हृदय में ही निवास करें ।"

गजासुर ने नारद का परामर्श स्वीकार किया । उसने शिव का पूजा-अर्चन प्रारंभ कर दिया । वह रात-दिन पंचाक्षरी मंत्र का जाप करता और शिव के ध्यान में लीन रहता । शिव प्रत्यक्ष हुए तो गजासुर ने प्रणिपात कर निवेदन किया, "परमेश्वर, आप सदा मेरे हृदय में ही निवास करें ।"

शिव ने गजासुर की प्रार्थना स्वीकार की और लिंग रूप में गजासुर के हृदय में रह गये । गजासुर शिव को मानसिक पूजाएं अर्पित करने लगा ।

शिव को अपने स्थान पर न पाकर पार्वती विकल हो गयीं । उन्होंने रुद्रगणों को शिव की खोज के लिए भेजा । पार्वती को पता चला कि शिव लिंग रूप में गजासुर के हृदय में निवास कर रहे हैं ।

पेशे का धर्म

कृष्णापुर में वीरभद्र नाम का एक ज्योतिषी था। अपनी विद्या के लिए उसकी काफ़ी प्रसिद्धि थी। वह हाथ की रेखाएं देखकर न केवल किसी का भविष्य बता देता था, बल्कि अंजन लगाकर खोयी हुई चीज़ों का पता भी बता देता था।

एक दिन की बात है, वीरभद्र एक पड़ोसी गाँव में किसी काम पर गया। दोपहर के समय जब वह अपने गाँव को लौट रहा था, तो रास्ते में वह एक सराय के पास विश्राम करने के लिए रुक गया। सराय के चबूतरे पर अपना अंगोछा बिछाकर वह लेट गया और छाता अपनी बगल में रख लिया। वीरभद्र थका हुआ तो था ही। उसे गहरी नींद आगयी और फिर शाम को ही उसकी आँखें खुलीं। उसे बगल में अपना छाता दिखाई नहीं दिया।

वीरभद्र ने गाँव के मुखिया से दरख़ास्त की कि उसका छाता खो गया है।

मुखिया मुस्करा कर बोला, "छाते का पता लगाना तुम्हारे लिए कोई मुश्किल बात नहीं है। अंजन लगाकर देख लो, पता लग जायेगा!"

"मुखिया जी, मैं ऐसा कर सकता था। लेकिन मैं अंजन लगाकर खोयी हुई चीज़ का पता बताने का शुल्क दो रुपये वसूल करता हूँ। यदि आप दो रुपये देने के लिए तैयार हों तो मैं अंजन लगाकर छाते का पता लगा लूँगा।" वीरभद्र ने खीज कर उत्तर दिया।

कृतज्ञता का बोझ

चांदपुर गाँव में रामनाथ नाम का एक मध्य वयस्क आदमी रहता था। वह अत्यन्त गरीब था। एक बार गाँव के दफ़्तरी सूरजमल से उसे कोई काम आ पड़ा। उसने सूरजमल के पास जाकर अपनी विपदा बतायी। साधारणतया सूरजमल किसी की मदद नहीं करता था। पर उस समय वह कुछ ज़्यादा ही प्रसन्न था। उसने रामनाथ की बातें ध्यान से सुनीं और उसे मुसीबत से बचने का उपाय बताया। रामनाथ ने उसकी सलाह से फ़ायदा उठाया।

रामनाथ गरीब था, पर उसके हृदय में दफ़्तरी की मदद के लिए कृतज्ञता का भाव था और वह अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए सूरजमल को कुछ भेंट देना चाहता था। उसने गाँव के लोगों से सलाह माँगी।

लोगों ने कहा, "रामनाथ, तुम्हारी हैसियत ही क्या है कि तुम दफ़्तरी को कुछ दो। वह गाँव का मुखिया भी है और धनवान भी है। फिर भी, अगर तुम कुछ देना ही चाहते हो तो जो अचार तुम बनाते हो, उसमें से थोड़ा अचार दे दो! सूरज मल को अचार बहुत पसन्द है।"

रामनाथ आम का अचार बनाने में सिद्धहस्त था। उस गाँव का साहूकार उससे अचार बनवाकर शहर में बेचता था। साहूकार रामनाथ को मज़दूरी के बदले थोड़ा अचार दे देता था। रामनाथ उस अचार को गाँव में बेचकर थोड़े पैसे बना लेता था।

रामनाथ ने उस अचार में से थोड़ा-सा अचार सूरजमल को भेंट स्वरूप दे दिया।

सूरजमल ने वह अचार अपनी मां को देते हुए कहा, "मां, मैंने जो रामनाथ की मदद की तो वह कृतज्ञता दिखाने के लिए यह अचार दे गया है। तुमने कहा था न, कि कोई कुछ भेंट दे तो इनकार नहीं करना चाहिए। इसलिए तुम्हारी बात मानकर मैंने यह अचार लिया है। उसका अचार बहुत मशहूर है। घर के सब लोग

राधे श्याम

इसका स्वाद ले सकते हैं ।"

सूरजमल की मां ने अचार चखकर देखा मुँह सिकोड़कर बोली, "यह अचार तुम्हें ही भेंट में मिला है । तुम्हीं इसे खा लेना । घर में तो और कोई इसे खायेगा नहीं ।"

सूरजमल ने शाम को भोजन के समय वह अचार चखा तो उसे बड़ा स्वादिष्ट लगा । उसने दो-तीन दिन तक साग-सब्जी छोड़कर केवल अचार से ही खाना खाया । परिणाम स्वरूप उसे बदहज़मी हो गयी । उसकी हालत इतनी ख़राब हुई कि उसने चारपाई पकड़ ली । उसकी मां ने वैद्य के पास खबर भेजी ।

वैद्य शिरोमणि आयुर्वेदिक चिकित्सा का अच्छा जानकार था । उसने मुखिया की जाँच की और कहा, "सूरजमल जी, आप की हालत तो बड़ी ख़राब है । रजत भस्म का सेवन करने से आप की तबीयत सुधर सकती है । इसका खर्च दस रुपये आयेगा ।"

लाचार होकर दफ़्तरी सूरजमल ने वैद्य को दस रुपये दे दिये । वैद्य शिरोमणि की दवा खाने से दो दिन के अन्दर ही सूरजमल की तबीयत संभल गयी और अगले दो दिन में वह पूर्ण स्वस्थ हो गया ।

दफ़्तरी सूरजमल एक नम्बर का कंजूस था । उसे यह सोच होने लगा कि जिस रामनाथ की उसने मदद की, उसी के कारण उसने बीमारी भी झेली और दस रुपये भी गँवाये ।

आख़िर उसने एक उपाय सोचा और शिरोमणि को बुलाकर कहा, "वैद्य जी, आपने मेरे इलाज के लिए दस रुपये वसूल किये, यह तो ठीक है, लेकिन आपको सब जगह यह कहना होगा कि आपने इलाज के लिए मुझसे पचास रुपये लिये हैं । अगर आपने ऐसा न किया तो इस गाँव में आपका जीना मुहाल हो जायेगा ।"

सूरजमल शहर के दफ़्तर में बैठने के कारण दफ़्तरी कहलाने लगा था । मुखिया तो वह था ही । वैद्य उसकी बात से डर गया ।

वैद्य बोला, "आप जैसा चाहते हैं, मैं वैसा ही कह दूँगा । इसमें मेरा नुक़सान के बदले फ़ायदा है, क्योंकि अब सब लोग मेरे इलाज का ज़्यादा खर्च देने लग जायेंगे ।" वैद्य ने

सूरजमल को नमस्कार किया और चला गया।

सूरजमल ने रामनाथ को बुलवाया। बोला, "देखो, रामनाथ, तुमने मुझे जो अचार दिया था, उसे खाने से मैं बीमार पड़ गया। इलाज में मेरे पचास रुपये खर्च हो गये। उन पचास रुपयों के देनदार तुम हो। वह रक़म मुझे दे दो !"

रामनाथ का चेहरा फक़ होगया। वह घबराकर बोला, "दफ़्तरी साहब, मैं तो बहुत गरीब हूँ। भला, इतना धन मैं कहाँ से ला सकता हूँ ?"

"मैं यह नहीं जानता कि तुम कहाँ से लाओगे और कैसे लाओगे ? मेरा मांगना न्याय-संगत है। अगर तुमने यह रक़म मुझे नहीं दी, तो तुम्हें इसकी सज़ा भुगतनी पड़ेगी।" सूरजमल ने कड़ककर कहा।

रामनाथ वहाँ से चुपचाप उठ आया और वैद्य के पास जाकर बोला, "वैद्य जी, मुझे तो सज़ा भोगनी ही है। लेकिन मैं बेगुनाह नहीं, अपराध करके सज़ा भोगूँगा। और वह अपराध होगा, आप की हत्या !"

"लेकिन मेरी हत्या क्यों ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?" वैद्य ने काँपते हुए पूछा।

"तुमने मामूली बीमारी के इलाज के लिए पचास रुपये लिये ! वे रुपये मुखिया मुझसे माँग रहा है। अगर यह छोटी-सी रक़म होती तो मैं मेहनत-मज़दूरी करके जैसे-तैसे चुका देता। पर मैं पचास रुपये कहाँ से लाऊँ ?" रामनाथ ने अपनी सारी रामकहानी वैद्य को सुना दी।

वैद्य शिरोमणि ने सारा किस्सा सुना तो उसे बड़ा क्षोभ हुआ। वह बोला, "अच्छा, तो अब मैं समझ गया कि असली बात क्या है ? एक गरीब के साथ अन्याय करनेवाले गाँव के मुखिया को सबक़ सिखाना होगा।" उसने रामनाथ को पास बुलाकर उसे कान में कुछ समझाया।

वैद्य की बातें सुनकर रामनाथ उसके पैरों पर गिर पड़ा और बोला, "आप तो महान सज्जन पुरुष हैं, मैं बेकार ही आपको मारने दौड़ा था।"

इसके बाद रामनाथ गाँव के कुछ और बुजुर्गों के घर भी गया। उन्हें साथ लेकर वह सूरजमल के घर पहुँचा। रामनाथ ने सबके

सामने सारा किस्सा बताया और सबसे विनती की कि उसके साथ न्याय किया जाये ।

गाँव के सभी लोगों को मुखिया से कोई न कोई काम पड़ता था । वह शहर का दफ़्तरी भी था, इसलिए उससे कोई भी बिगाड़ना नहीं चाहता था । सब बड़े बूढ़ों ने रामनाथ से यही कहा, "रामनाथ, तुम्हारे कारण ही सूरजमल जी बीमार पड़े । इसलिए इलाज का खर्च तुम्हें ही उठाना चाहिये ।"

अब रामनाथ ने मुखिया की तरफ़ ताका और गिड़गिड़ाकर बोला, "मुखिया जी, क्या सचमुच ही मुझे यह धन चुकाना पड़ेगा ? क्या मुझ जैसे गरीब को देखकर आपका दिल नहीं पसीजता ?"

"अगर मैं हर गुनाहगार को देखकर अपना दिल पानी करने लगूँगा, तो फिर तो मैं यह पद संभालने योग्य नहीं रह जाऊँगा । तुम्हें मेरे इलाज का खर्च देना ही पड़ेगा !" सूरजमल ने साफ़ कह दिया ।

सूरजमल का जवाब सुनकर रामनाथ ज़ोर से चीखकर नीचे गिर गया । सब लोग घबराकर पूछने लगे, "रामनाथ को क्या हो गया ?"

वैद्य ने तुरन्त रामनाथ की जाँच की और कहा, "इसे रक्तचाप हो गया है । कोई असहनीय दुख या आवेश होने पर ऐसी अवस्था हो जाती है । इस जैसे गरीब आदमी को इस बीमारी का शिकार नहीं होना चाहिए था । इसके इलाज के लिए स्वर्ण भस्म का उपयोग आवश्यक है । सौ रुपये खर्च होंगे । यह खर्च कौन उठायेगा ?"

वैद्य की बात पर गांव के सभी बुजुर्गों ने परस्पर सलाह-मशविरा किया और कहा, "ऐसे मामलों में क्या निर्णय लेना चाहिए, यह बात अभी कुछ ही देर पहले हमारे मुखिया सूरजमल जी ने स्पष्ट कर दी है । उनके कारण ही रामनाथ को यह कठिन रोग हुआ है, इसलिए इलाज का खर्च भी उन्हीं को उठाना पड़ेगा ।"

सूरजमल यह निर्णय सुनकर चौंक पड़ा । वह समझ गया कि यह रामनाथ का रचा हुआ नाटक है । उसके मन में यह सन्देह भी हुआ कि इस नाटक में वैद्य शिरोमणि की काफ़ी बड़ी भूमिका होनी चाहिये ।

सूरजमल ने वैद्य की तरफ़ तीक्ष्ण दृष्टि डालकर कहा, "रक्तचाप के इलाज के लिए सौ रुपये वसूल करते हो ? जरा-सी बात के लिए इतनी बड़ी रक़म ?"

वैद्य ने विनयपूर्वक निवेदन किया, "मैंने आपकी बदहज़मी का इलाज किया था तो आपने मुझे पचास रुपये दिये थे। आपने उस रक़म को अधिक नहीं माना था। बदहज़मी की बीमारी तो एक दिन में सुधर सकती है, लेकिन रक्तचाप तो जीवन भर सताता रहता है। ऐसी जटिल बीमारी के इलाज के लिए मैंने सिर्फ़ सौ रुपये इसलिए माँगे, क्योंकि रामनाथ ग़रीब आदमी है, मेरे इलाज का ख़र्च नहीं उठा सकता।"

सूरजमल सोच में पड़ गया कि क्या किया जाये। इतने में ही रामनाथ धीरे से उठ बैठा और बोला, "यह क्या हो गया है मुझे ?"

वैद्य ने उसके कान के पास मुँह लेजाकर ज़ोर से कहा, "तुम्हें रक्तचाप हो गया है। इलाज में सौ रुपये ख़र्च होंगे। तुम्हें मुखिया को पचास रुपये देने हैं न ! वे इसे घटाकर पचास रुपये तुम्हें दे देंगे। मुझसे इलाज करवाना है, तो बाकी पचास की व्यवस्था और करो !"

वैद्य शिरोमणि के मुँह से सारा समाचार सुनकर रामनाथ उठ खड़ा हुआ। उसने सूरजमल के पैर पकड़ लिये और नम्र शब्दों में बोला, "मुखिया जी, आप तो बड़े ही धर्मात्मा हैं। मैं मरने के लिए तैयार हो जाऊँगा, पर आपसे एक कौड़ी भी न लूँगा। अपनी मुसीबत मैं अपने आप झेलूँगा। मैं कोई इलाज नहीं कराना चाहता।"

यह कह कर रामनाथ वहाँ से चला गया।

सूरजमल को बड़ा अपमान महसूस हुआ। इसके बाद उसने फिर कभी किसी के साथ अन्याय करने का साहस नहीं किया। रामनाथ को भी समझ आगयी कि एक मामूली से उपकार के बदले उसे इतना कृतज्ञ नहीं होना चाहिये था कि वह बोझ बनकर उसके गले पड़ जाये। उसने अनावश्यक रूप से भेंट देने की अपनी आदत छोड़ दी।

नार्वे लेमिंग्स

एक विशिष्ट जाति से सम्बंधित नार्वे लेमिंग्स नाम के जानवर हर तीन-चार वर्ष में एक बार एक अत्यन्त विचित्र आचरण करते हैं। वे जिन पहाड़ों में निवास करते हैं, वहाँ से झुंडों में निकलते हैं और समुद्र की ओर यात्रा करके समुद्र-जल में कूद जाते हैं और अपने शरीर को जल में डुबोये तैरते जाते हैं। ये जानवर ऐसा क्यों करते हैं, आज तक इस बात का पता नहीं चल सका और यह एक प्राकृतिक आश्चर्य बनकर रह गया है।

सामान्यतया एक लेमिंग वर्ष में दस बच्चों को जन्म देता है। इस हिसाब से इनकी संख्या दो-तीन वर्ष में इतनी अधिक बढ़ जाती है कि समीप में प्राप्त होनेवाला आहार पर्याप्त नहीं होता। हो सकता है, इसी कारण ये इस आशा से यात्रा करते हैं कि इन्हें समुद्र के उस पार आहार प्राप्त हो जाये। इस प्रकार ये डूबते जाते हैं। लेकिन यह केवल कुछ लोगों का अनुमान ही है।

नार्वे में पर्वत-श्रृंखलाएँ समुद्र के निकट ही हैं। यात्रा आरंभ करने के बाद लेमिंग्स अपना दिन का समय आहार की खोज में और सोने में बिताते हैं। रात को वे अपनी समुद्री यात्रा करते हैं। रास्ते में अनेक विघ्न-बाधाओं के आने पर ये सामूहिक रूप से उनका सामना करते हैं। रास्ते में मिलने वाले दूसरे पक्षी और जानवर इन्हें बड़ी आसानी से उठा ले जाते हैं। इस प्रकार, अंत में जो बचते हैं, वे ही झुंडों में आगे बढ़ जाते हैं

लेमिंग्स जानवरों का सिर गोल, पैर छोटे, पूंछ नाटी होती है। ये पूर्वी यूरोप, एशिया और अमरीका में पाये जाते हैं। लेकिन नार्वे में इनकी संख्या सबसे अधिक है। ये काई, घास, पत्ते, छिलके आदि खाते हैं। चील, उल्लू, सियार, भेड़िये आदि पशु-पक्षी बड़ी आसानी से इनका शिकार कर इन्हें खा जाते हैं। साधु प्रकृति वाले लेमिंग्स जानवरों के प्राण हमेशा ख़तरे में रहते हैं।

ग्रीष्म काल में धरती पर सुरंग, गड्ढे बनाकर जीनेवाले लेमिंग्स जाड़े के लिए आवश्यक आहार का संचय करके बर्फ़ की चट्टानों के नीचे चले जाते हैं। इन्हीं में कुछ भिन्न किस्म के जानवर भी होते हैं, जिनके पैरों में शरत ऋतु में लंबे-लंबे नाखून निकल आते हैं। सुरंग खोदने में ये नाखून सहायक होते हैं।

नई सुबह हुई, नई धूप जागी

नया सनलाइट
डिटर्जेंट पाउडर

आपके कपड़ों में धूप सी चमक दमक जगाए।

आप भी अपने घर में सनलाइट की जगमगर ले आइए. नया सनलाइट डिटर्जेंट पाउडर वज़न में एकदम हल्का है, लेकिन असर में कहीं ज़्यादा है. क़ीमती पाउडरों जैसा कारगर, पर फिर भी बहुत किफ़ायती!

सनलाइट में एक ख़ास पदार्थ है, जो साधारण पाउडरों में नहीं. यह कपड़ों की रग रग से मैल निकाल कर उनमें कुदरती चमक दमक ले आता है. सनलाइट से न हाथों को तकलीफ़, न कपड़ों को नुकसान और इसकी खुशबू ऐसी ताज़ा भीनी भीनी है, जो आपके कपड़ों को भा जाएगी. आप भी सनलाइट की चमक दमक अपने जीवन में ले आइए.

एक बार आज़मा कर तो देखिए–
दाम बहुत ही कम

आपके कपड़ों में धूप सी चमक दमक का वादा

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

OBM/2568/R/HIN

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां नवम्बर १९८५ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. C Morabad

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ सितम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

जुलाई के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : शोर कम!

द्वितीय फोटो : लगा दम!!

प्रेषक : श्रीधर शर्मा, द्वारा एल. एन. शर्मा, पोस्ट बड़ु, नागौर जिला (राजस्थान)

'क्या आप जानते हैं' के उत्तर

१. पैथागरस २. एरहोस्टीन्स ३. ध्रुव प्रदेशों में चुंबक शक्ति अधिक होती है ४. रोटरडाम बन्दरगाह ५. आस्ट्रेलिया में।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

The stories, articles and designs contained herein are exclusive property of the Publishers and copying or adopting them in any manner will be dealt with according to law.

हिस्सा लो

पॉपिन्स 'स्पेल-ए-प्राइज़' प्रतियोगिता में

जीतो!

१ला इनाम : डिज़्नीलैन्ड यू.एस.ए. और जापान की एक सैर.

५० २रे इनाम : शानदार स्पोर्ट्स बाइसिकल!

५० पहले प्रवेशपत्रों के इनाम हर हफ्ते : बढ़िया डिजिटल घड़ियाँ!

प्रवेशपत्र

(इस कूपन को सिर्फ अंग्रेजी में भरो)

नाम :

पता :

पिन :

उम्र : जन्म तिथि :

१. अपने शब्द या शब्दों को इस जगह पर चिपकाओ. एक अक्षर के लिए एक ही खाना इस्तेमाल करो. अगर PARLE POPPINS शब्द बनाना हो तो PARLE और POPPINS दोनों के बीच एक खाना खाली छोड़ दो.

२. अब अपने केयाॅन या रंगीन पेंसिलों से इस रेखाचित्र में पारले पॉपिन्स रैपर के सही रंग और अक्षर भर दो.

मेरा बच्चा/पालित और मैं, ऊपर बताए गये प्रतियोगिता के सभी नियमों और शर्तों का पालन करने की महमति देते हैं.

बच्चे के माता-पिता/पालक के हस्ताक्षर

अधिक जानकारी और ज्यादा प्रवेशपत्र अपनी मनपसंद दुकान से लो.

जल्दी करो!
आखिरी तारीख
३० सितंबर, १९८५!!

अपने प्रवेशपत्र इस पते पर भेजो
पॉपिन्स
'स्पेल-ए-प्राइज़'
कॉन्टेस्ट
पो. बॉ. नं. ८२७३,
बम्बई ४०० ०४९

everest/85/PP/356-hn

CHANDAMAMA

It unfolds the glory of India—both past and present—through stories, month after month.

Spread over 64 pages teeming with colourful illustrations, the magazine presents an exciting selection of tales from mythology, legends, historical episodes, glimpses of great lives, creative stories of today and knowledge that matters.

In 12 languages and in Sanskrit too.

Address your subscription enquiries to:

DOLTON AGENCIES 188 N.S.K. ROAD MADRAS-600 026

"बनता है ये खेल खेल में हँसी खुशी में, रेल पेल में
सोच समझ कर झट चिपकाओ
मौज-मौज में इसे बनाओ"

फ़ेवी फ़ेयरी

"जादू का करिश्मा नहीं
हाथ का कमाल है
पैसे का सवाल नहीं
काम बेमिसाल है।"
"जल्दी आकर हमें बताओ
करना क्या है—यह समझाओ।"
"जल्दी आओ
सब कुछ सुन लो....
सोचो समझो झट चिपकाओ
फ़ेविकोल एम आर को लाओ
मोर बनाओ,
गुड़िया, टोकरी, पर्स बनाओ
न चिप-चिप है, न है गंदगी
मज़े-मज़े में करते जाओ
करते जाओ॥"

पोर्की पिग (सूअर) बनाने की क्रमवार रीति मुफ्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन भेजिए, या इस पते पर लिखिए 'फ़ेवी फ़ेयरी' पोस्ट बाक्स ११०८४ बम्बई-४०० ०२०

(Ch).

फ़ेविकोल एम आर
सिन्थेटिक एड्हेसिव

उत्तम काम, उत्तम नाम फ़ेविकोल का यह परिणाम

OBM-5572 HN